ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 15 मार्च 2026 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 15 मार्च 2026 से 21 मार्च 2026

चैत्र कृ. 11 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 67, अंक 11, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 202 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रू. ● वार्षिक शु. 300/- रू.

पाणिनि महाविद्यालय, रेवली का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

पाणिनि महाविद्यालय, रेवली का वार्षिकोत्सव हर्षोल्लास एवं प्रेरणाप्रद वातावरण में सम्पन्न हुआ। वार्षिकोत्सव का आरम्भ प्रातः 7.30 बजे वैदिक यज्ञ से हुआ जिसमें रामलाल कपूर ट्रस्ट के सदस्यों ने मुख्य यजमान के रूप में सहभागिता की। यज्ञब्रह्मा के रूप में श्री कृष्णदेव कौटिल्य (झारखण्ड) रहे। मंच पर अन्य विद्वानों का भी सान्निध्य यजमानों को प्राप्त हुआ, जिनमें आचार्य प्रदीप कुमार शास्त्री, आचार्य रामप्रकाश वर्णी (हरद्वार) तथा आचार्य विवेक चैतन्य जी (हिमाचल) आदि प्रमुख रहे। हजारीबाग (झारखण्ड) की कन्याओं ने ईश्वर भक्ति के गीत प्रस्तुत किये तथा

आचार्य रामप्रकाश वर्णी जी ने भावपूर्ण सारगर्भित उद्बोधन प्रस्तुत किया।

द्वितीय सत्र में ब्र. बलराम (पाणिनि महाविद्यालय, रेवली) ने यजुर्वेद के 40 वें अध्याय का सस्वर पाठ किया तथा ब्र. ओम् कुमार ने गायत्री मन्त्र का बांसुरीवादन किया। इसके बाद अनेक विद्वानों के भावपूर्ण उद्बोधन हुए जिनमें आचार्य विवेक चैतन्य जी, नरेश कुमार धीमान् जी, राम प्रकाश वर्णी जी, प्रशस्य मित्र शास्त्री जी आदि प्रमुख रहे। धीमान् जी ने विरजानन्द आश्रम तथा रामलाल कपूर ट्रस्ट का इतिवृत्त प्रस्तुत किया और ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित नवीन ग्रन्थ वैदिककोष के बारे में भी सबको बताया। इसके सम्पादन में पांच वर्ष का नियमित समय लगा

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

एम.आर.ए. डी.ए.वी. सोलन ने मनाई स्वामी दयानन्द जयन्ती

एम.आर.ए. डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सोलन में आर्य समाज के संस्थापक और महान समाज सुधारक "महर्षि दयानंद सरस्वती" जी की 202वीं जयंती बड़े ही उत्साह और भक्तिभाव के साथ मनाई गई। इस पावन अवसर पर विद्यालय जी के 'वेदों की ओर लौटो' के संदेश पर प्रकाश डालते हुए छात्रों को सत्य, नैतिकता और सामाजिक समानता के पथ पर चलने की प्रेरणा दी।

इस उपलक्ष्य में छात्रों द्वारा भजन, भाषण और लघु नाटिका के माध्यम से स्वामी जी के जीवन के

में भव्य वैदिक यज्ञ का आयोजन किया गया, जिसमें छात्रों और शिक्षकों ने सामूहिक रूप से आहुति देकर विश्व शांति की प्रार्थना की। पूरे परिसर में गूँजते वैदिक मंत्रों ने वातावरण को पवित्र और ऊर्जामय बना दिया।

विद्यालय की प्रधानाचार्या ने स्वामी प्रेरक प्रसंगों को जीवंत किया गया। समारोह का समापन शांति पाठ और स्वामी जी के आदर्शों को जीवन में उतारने के संकल्प के साथ हुआ, जिससे नई पीढ़ी में अपनी संस्कृति और सुधारवादी विचारों के प्रति गौरव की भावना जागृत हुई।

डी.ए.वी. सैक्टर-39 चण्डीगढ़ में होली

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सैक्टर 39 डी, चंडीगढ़ में नन्हे-मुन्ने विद्यार्थियों के लिए होली उत्सव का रंगारंग आयोजन हर्षोल्लास और उत्साह के साथ संपन्न हुआ। विद्यालय परिसर को आकर्षक सौहार्द, भाईचारे और एकता का प्रतीक है। उन्होंने बच्चों को सुरक्षित, संयमित एवं पर्यावरण-अनुकूल होली मनाने का संदेश भी दिया।

नन्हे-मुन्ने बच्चों ने नृत्य, मधुर गीत तथा आकर्षक सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ

रंग-बिरंगी सजावट से सुसज्जित किया गया था।

कार्यक्रम का शुभारंभ विद्यालय की आदरणीय प्रधानाचार्या श्रीमती मनिंदर वोहरा जी द्वारा दीप प्रज्वलित कर किया गया। उन्होंने विद्यार्थियों को होली पर्व के आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्व से अवगत कराया और कहा कि होली केवल रंगों का त्योहार नहीं, बल्कि यह आपसी प्रेम, दीं। बच्चों ने होली से संबंधित लघु नाटिका एवं कविताओं की भी सुंदर प्रस्तुति दी।

मनोरंजक खेल, रचनात्मक गतिविधियाँ तथा प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया गया। सभी बच्चों ने 'ग्रीन होली' मनाने का संकल्प लिया।

सभी ने मिलकर एक-दूसरे को होली की शुभकामनाएँ दीं।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

{संपादक - पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 15 मार्च 2026 से 21 मार्च 2026

देवों के मार्ग पर चलें

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

आ देवानामपि पन्थामगन्म, यच्छक्नवाम तदनुप्रवोढुम्।
आग्निर्विद्वान्त्स यजात् स इद्धोता, सोऽध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति।।

अथर्व 19.59.3

ऋषिः **ब्रह्मा**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**अपि**) क्या (**देवानां**) देवों के (**पन्थां**) मार्ग पर (**आ–अगन्म**) [हम] चलें? [हाँ], (**यत्**) यदि (**तत् अनुप्रवोढुम्**) उस पर स्वयं को चलने में (**शक्नवाम**) समर्थ हों। (**अग्निः**) आत्मा (**विद्वान्**) विद्वान है, (**सः**) वह (**यजात्**) यज्ञ करे, (**सः**) वह (**इत्**) सचमुच (**होता**) होम–निष्पादक है। (**सः**) वही (**अध्वरान्**) यज्ञों को और (**सः**) वही (**ऋतून्**) ऋतुओं को (**कल्पयाति**) रचाये।

● आओ, हम देवों के मार्ग पर चलें। यज्ञ के तंतु से बंधे रहना ही देवों का मार्ग है। देखो, ये सूर्य, चन्द्र, अग्नि, पृथिवी, ऋतु, संवत्सर आदि देव कैसे 'यज्ञ' के मार्ग पर चल रहे हैं। कभी उनके यज्ञ–पालन में व्यतिक्रम नहीं होता। शरीर में भी मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि देव कैसे संगठित हो देवयान का अवलम्बन कर शरीर–यज्ञ को चला रहे हैं। समाज में भी 'देव' पदवी को पाये हुए महापुरुष 'यज्ञ' के ही पथ पर चला रहे हैं। और, सबसे बड़ा देवों का देव परमात्मा भी निरन्तर देव–मार्ग पर चलता हुआ इस ब्रह्मांड–यज्ञ का सम्पादन कर रहा है। हम चाहते हैं कि हम भी इस देव–मार्ग के पथिक बनें। क्या तुम चाहते हो कि इस मार्ग पर चलना अति कठिन है, तलवार की धार पर चलने के समान है, अतः पहले शक्ति को तोल लो कि तुम इस पर स्थिर रह भी सकोगे या नहीं, उसके पश्चात् इस मार्ग पग बढ़ाना? सुनो, हमने अपने सामर्थ्य को भलीभांति परख लिया है। हमारा आत्मा 'अग्नि' है, अग्रणी है, तेज का पुंज है, ज्योतियों की ज्योति है। वह 'विद्वान्' है, देवों की राह पर चलना और चलाना जानता है। अतः हमें देव–प्रदर्शित यज्ञ–मार्ग से भटक जाने का कोई भय नहीं है। हम निश्चित होकर उसके हाथों में अपनी 'यज्ञ' की पतवार सौंप रहे हैं। वह 'होता' है, यज्ञ–निष्पादन में कुशल है, संस्कृत हवि का होम करने में निष्णात है। वह जानता है कि यज्ञ को 'अध्वर' अर्थात् हिंसा–रहित ही होना चाहिए। भद्रजनों को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया गया यज्ञ यज्ञ नहीं है। हमारा आत्मा 'अध्वर' यज्ञों को रचाये और वही यह भी देखे कि किस यज्ञ के लिए कौन सी ऋतु, कौन सा समय उपयुक्त है, क्योंकि काल–अकाल का विचार किये बिना प्रारंभ किया गया या सफल नहीं होता। आओ, हम देव–पथ के पथिक बनें। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु–भक्ति

● **महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती**

स्वामी जी ने 'प्रभु भक्ति' पुस्तक में मन के महत्त्व पर गहन चर्चा की है। मानव शरीर को मन ही चलाता है। यह मन यदि अनियन्त्रित हो गया तो यह जीवन में बाधक बनकर तंग करेगा, प्रभु दर्शन से वंचित करेगा। श्री कृष्ण जी ने भी कहा है कि निःसन्देह मन बड़ा चंचल है, कठिनता से वश में होने वाला है परन्तु अभ्यास और वैराग्य से इसे वश में किया जा सकता है।

मन को ज्ञान से वश में किया जा सकता है। जब हम नेत्र बन्द करके मन्त्रों के मानसिक जप से इसे नियन्त्रित करके शुद्ध संकल्प करने लगते हैं। इसकी गति पर निरन्तर ध्यान रखते हैं तो यह शुद्ध संकल्प वाला होकर हमारे जीवन को आशातीत गति से उन्नति की ओर लेकर जाता है। इसी से अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति होती है, मानव जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग खुल जाता है, अतः मन को वश में करने का निरन्तर प्रयत्न करना ही होगा....।

.... अब आगे

संकल्प के संस्कार को धोना–

कोई भी भला हो या बुरा संकल्प, उनके अनुसार चाहे कोई वचन बोला जाय या न, कोई कर्म किया जाए या न, परन्तु मन पर अपना थोड़ा–बहुत प्रभाव अवश्य छोड़ जाता है। इसी प्रभाव का नाम संस्कार है। इन संस्कारों ही से वृत्ति बनती है और मनुष्य को बुरे या अच्छे कामों में लगाती है। वृत्ति दो प्रकार की होती है–स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल–वृत्ति में काम–क्रोध आदि सम्मिलित हैं और सूक्ष्म–वृत्ति में संस्कार। ये संस्कार ही मनुष्य के अधिक शत्रु हैं। ये जन्म–जन्मान्तर तक साथ रहते हैं। कई बार ऐसा हुआ कि मनुष्य ने जो कर्म इस जन्म में भूलकर भी नहीं किये होते, न देखे और सुने होते हैं, वही कर्म यह मन करने लगता है। जब इसे इस जन्म के संस्कारों से निवृत्त किया तो ऐसे संकल्पों की रेखाएँ मन पर देखी गईं, जिन्हें कभी स्वप्न में भी नहीं देखा था। वास्तव में यह वे सूक्ष्म संस्कार हैं, जो किसी पिछले जन्म में, किसी संकल्प के कारण मन पर रह गये थे इसलिए कोई भी खोटा या बुरा संकल्प मन में आने ही नहीं देना चाहिए और यदि बलपूर्वक आ ही जाए तो फिर क्या करें ? प्रथम तो उसे तत्काल निकाल देने का प्रयास करना चाहिए और यदि संस्कार की कोई रेखा मन पर रह जाए तो उसे धोकर मिटा डालें। इसकी विधि यह है कि ओ३म् अथवा गायत्री मन्त्र का जाप किया जाए। मन को शुद्ध करने में गायत्री मन्त्र का जाप बहुत ही प्रबल सिद्ध हुआ है परन्तु, मन्त्र के अर्थ भली–भाँति स्मरण कर लेने चाहिएँ। ओम् तथा गायत्री–मन्त्र का जाप न केवल नये–बुरे संस्कारों को, अपितु जन्म–जन्मान्तर के बुरे संस्कारों को भी दूर करने में समर्थ है। यह अनुभूत बात है, इसके लिए प्रमाणों की आवश्यकता नहीं है। संशय–बुद्धि रखनेवाले कुछ लोग यह शंका करते हैं कि–

'गायत्री मन्त्र के जाप का मन की शुद्धि अथवा प्रभु–दर्शन से क्या सम्बन्ध है ? इसमें तो सत्–चित्–आनन्द और जगदुत्पादक ईश्वर के दिव्य गुण का ध्यान करके और उसके शुद्ध स्वरूप को सामने रखकर उससे अपनी बुद्धि को प्रकाशित करने और प्रेरणा करने ही की तो प्रार्थना की गई है ! इससे बुद्धि चमक जाए, और कुछ नहीं हो सकता।'

परन्तु वे इस बात को भूल जाते हैं कि आत्मा के लिए सबसे पहली आवश्यक वस्तु और प्रभु–प्राप्ति का सबसे प्रथम साधन ज्ञान ही है और ज्ञान भी बुद्धि के निर्मल होने ही से प्राप्त होगा। आत्मा के दो काम हैं–ज्ञान–प्राप्ति और प्रयत्न करना। 'योगदर्शन' में भी ब्रह्म–प्राप्ति का सबसे प्रथम साधन प्रज्ञा अर्थात् बुद्धि ही को बताया गया है। योगदर्शन 1, 20 में समाधि के साधन बताकर फिर यह दिखाया गया है कि समाधि से प्रज्ञा (बुद्धि) मिलती है। इस सूत्र में समाधि के साधन ये बताये गये हैं। प्रथम–पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिए, तब स्मृति–भण्डार खुलता है। इन तीनों बातों के हो जाने से भक्त की अशान्ति का नाश हो जाता है, चित्त शान्त और समाधिस्थ हो जाता है। तब प्रज्ञा–बुद्धि जाग उठती है और यही प्रज्ञा भगवान् के दर्शन कराने में पूरी सहायक बनती है। गायत्री मन्त्र में बुद्धि देने के लिए इसीलिए प्रार्थना की गई

है। योगियों ने योग–विद्या के अनुसार समाधि–अवस्था के पश्चात् जिस ज्ञान को प्राप्त किया, उसे गायत्री–मन्त्र का विधिपूर्वक और पर्याप्त संख्या तथा काल तक जाप करनेवाले पा गये।

गायत्री शब्द दो धातुओं 'गै+त्रा' से बना है अर्थात् गायत्री गाने–वाले–जाप करनेवाले को बचाती है, रक्षा करती है, तार देती है। अतएव गायत्री मन्त्र का जाप और उसके साथ ओ३म् का जाप भक्त के मन को बहुत शीघ्र प्रभु–दर्शन का अधिकारी बना देता है।

तीसरा साधन–सत्संग

मन के सुधार के लिए तीसरा साधन सत्संग है। भले पुरुष की संगत में बैठने से मन के संकल्प–विकल्प इस प्रकार रुक जाते हैं, जिस प्रकार अग्नि के समीप बैठने से शीत जाता रहता है या जैसे रामवन (कश्मीर) में चन्द्रभागा नदी के तट पर बैठते ही सारी गर्मी दूर हो जाती है। आपने कई बार देखा होगा कि पूर्ण श्रद्धा से आप किसी सच्चे महात्मा के पास गये हैं तो उसके निकट बैठने ही से आपका मन एकाग्र हो गया है। उस समय कोई संकल्प–विकल्प मन में नहीं उठता। इसीलिए तो कहा गया है–

तात ! स्वर्ग–अपवर्ग–सुख,
धरिय तुला इक अंग।
तुले न ताहि सकल मिलि,
जो सुख लव सत्संग।।

सत्सङ्ग में नित्य जाइये, इसमें आलस्य न करिये। बच्चे–बूढ़े, स्त्री–पुरुष, सबको सत्सङ्ग से लाभ पहुँचता है। इससे प्रातः समय में, उषःकाल में सबको चुपचाप एक अद्भुत प्रसाद मिलता है। काले कोयले को क्या आपने नहीं देखा ? जब धक् धक् जलती हुई अँगीठी में डाला जाता है और थोड़ी देर जलते हुए कोयलों की संगत में रहता है तो उसकी भी कालिख नष्ट हो जाती है और वह उसी गर्मी, तेज़ी और लाली के साथ चमकने लगता है, परन्तु अंगीठी से नीचे गिर पड़े, जलते कोयलों की सङ्गति से दूर हो जाए तो वह थोड़ी देर के पश्चात् फिर काला पड़ जाता है। सङ्गत का मन पर बड़ा भारी प्रभाव होता है, नित्य सत्सङ्ग का सेवन मन का कायापलट कर देता है, यदि कुछ दिनों, कुछ महीनों अथवा कुछ वर्षों के सत्सङ्ग से आपको कोई भी लाभ प्रतीत न हो तो घबराइये नहीं। लाभ और प्रभाव निरन्तर होता रहता है। हमें इस बात की ओर ध्यान देना चाहिए कि हमारा मन मैला है, वह एक बार धोने से ही स्वच्छ हो जायेगा, अथवा वर्षों ही उसे सत्संग की नदी में धोना पड़ेगा, यह बात मन की अवस्था पर निर्भर है और फिर कोई पता नहीं कि कौन–सी घड़ी में कौन–सा वचन हमारे मन पर ऐसा प्रभाव डाल दे जिससे युग–परिवर्तन हो जाए !

ऋषि दयानन्द जिन दिनों जेहलम में थे, उन दिनों वहाँ महता अमीचन्द जी बहुत सुन्दर भजन गाया करते थे परन्तु थे वे शराबी और उनका आचार भी कुछ बिगड़ चुका था। नित्य स्वामी जी के पास आते। एक दिन महता अमीचन्द ने प्रभु–भक्ति का बहुत ही मनोहर गान गाया। स्वामी जी ने सुना तो कहा, *"अमीचन्द ! हो तो हीरे, परन्तु कीचड़ में गिरे पड़े हो।"* बस, तीर चल गया। निशाना ठीक बैठ गया था। उसी समय से महता अमीचन्द का जीवन पलट गया, मदिरा छोड़ दी, व्यभिचार को महापाप समझने लगा और महता अमीचन्द सचमुच ईश्वर–भक्त बन गये। महर्षि के एक वाक्य ने एक शराबी व्यभिचारी को भक्त और शुद्धाचारी बना दिया इसीलिए मैं कहता हूँ कि सत्संग से उकताइये नहीं। निरन्तर प्रयत्नशील रहा करिये। प्रतीक्षा कीजिये कि कब आपके भाग्योदय की घड़ी आती है।

चौथा साधन–स्वाध्याय

मन को पवित्र रखने में स्वाध्याय भी बहुत महत्ता रखता है। 'शतपथ ब्राह्मण' में बतलाया है–

प्रिये स्वाध्यायप्रवचने भवतो युक्तमना भवत्ययराधीनोऽहरहरर्थान् साधयते सुखं स्वपिति परम–चिकित्सक आत्मना भवतीन्द्रियसंयमश्चैकारामता प्रज्ञावृद्धिर्यशो लोकपक्तिः। (11–5–7–1)

"स्वाध्याय (वेद का पढ़ना) और प्रवचन (वेद प्रचार) ये दोनों ऋषियों के प्यारे कर्म हैं। स्वाध्याय करनेवाला पुरुष एकाग्र मन हो जाता है, पराधीन नहीं होता। दिन–प्रतिदिन उसके प्रयोजन पूरे होते हैं, सुख से सोता है, अपने–आप का परम चिकित्सक बन जाता है। इन्द्रियों का संयम, सदा एकरस रहना, ज्ञान की वृद्धि, यश–प्राप्ति, लोगों को सुधारने और निपुण बनाने के काम, ये सब स्वाध्याय से प्राप्त होते हैं।"

'शतपथ' में एक और स्थान पर भी यह उपदेश है–

"मनुष्य इस सारी पृथिवी को धन से भरकर देता हुआ जिस फल को भोगता है, इससे तिगुने फल को अथवा उससे बड़े, अथवा अक्षय–फल को वह भोगता है जो ठीक–ठीक जानता हुआ प्रतिदिन स्वाध्याय करता है। इसलिए स्वाध्याय नियम से करना चाहिए।"

तैत्तिरीय उपनिषद् (शिक्षावल्ली अनुवाक 6) में मनुष्य के पन्द्रह विभिन्न कर्त्तव्य गिने गये हैं परन्तु प्रत्येक कर्त्तव्य के साथ स्वाध्याय और प्रवचन को मुख्य स्थान दिया गया है– "नाक मौद्गल्य यह मानता है कि स्वाध्याय और प्रवचन ही आवश्यक है, क्योंकि वह ही तप है।"

'योगदर्शन' के व्यास भाष्य में लिखा है–"स्वाध्यायः प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्षशास्त्राध्ययनं वा।" ओंकार आदि पवित्र करने वाले नामों का जाप और मुक्ति प्रतिपादक शास्त्रों को पढ़ना स्वाध्याय कहलाता है।

जब ऋषियों ने स्वाध्याय की इतनी महिमा गाई हो तो फिर सन्देह ही क्या रह जाता है ! जब हम स्वाध्याय करते हैं तो निश्चय जानिए कि हम भगवान् और ऋषियों से सत्संग करते हैं और सीधे रूप में उनसे प्रसाद पाते हैं। स्वाध्यायियों का यह अनुभव है कि कितने ही संशय अपने–आप उनके मिट गये, कितने ही रोगों की अनुभूत ओषधियाँ उनको मिल गईं। प्रभु के कोष में जो जायेगा, वह खाली हाथ नहीं लौट सकता, उसको तो मन एकाग्र करने के कितने ही साधन मिलेंगे। इसलिए नित्यप्रति वेद, उपनिषद् इत्यादि पठनीय श्रेष्ठ ग्रन्थों का स्वाध्याय अत्यन्त आवश्यक है। आप अनुभव करेंगे कि इससे आपका मन निर्मल होता जा रहा है।

क्रमशः

ईश्वर प्रदत्त मनुष्य की विशेषताएँ

मनुष्य है उस ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति, जो है सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान।
ऐ भोले मानव ! क्यों तू इधर–उधर है भटकता, अपने स्वरूप को ले पहचान।।

मनुष्य है उसकी पृथिवी पर सर्वोत्तम व अन्तिम कृति, जो है सर्वहितकारी व सर्वाधार।
ऐ मानव ! क्यों न तू सुकर्म करके, मोक्ष का अधिकारी बनता, तू ही तो है मोक्ष का द्वार।।

ऐ मनुष्य ! तू ने किए थे पूर्व जन्म में अच्छे कर्म, तभी प्रसन्न हुआ वह सच्चिदानन्द।
अब वेद–पथ पर चलने से बनेगा तेरा जीवन महान और मिलेगा आनन्द ही आनन्द।।

ऐ मनुष्य ! तुझे यह अनमोल जीवन मिला है, ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार।
अब जीवन तेरा होगा सार्थक तभी, जब करे तू वेदाध्ययन, ईश्वर भक्ति और परोपकार।।

ऐ मानव! तेरा यह मानव जन्म, है तेरे ही किये शुभकर्मो का प्रतिफल।
इस जीवन को तू यों ही न गवाँ, कर शुभ कर्म रख ईश्वर को याद हर क्षण हर पल।।

ऐ मनुष्य ! तेरे इस जीवन में वह ईश्वर देता है निःशुल्क अग्नि, वायु, जल और अन्न।
कृतज्ञ भाव से कर उसी की उपासना और रख निष्काम कर्म करने में तू मन।।

ऐ मानव! तुझे यह पावन जन्म मिला, तेरे ही किये पुरुषार्थ और परिश्रम के बल।
उद्देश्य बस यही है, अधिक शुभ कर्म करके इस आवागमन से निकल।।

मनुष्य ! उस कर्म–भोग–योनि में कर्म करने में ईश्वर ने तुझे रखा है पूर्ण स्वतन्त्र।
बुद्धि और कार्य क्षमता विशेष दी, पर फल तेरे हाथ नहीं, इसमें है तू परतन्त्र।।

बनाया मनुज सारी सृष्टि का उपभोक्ता, पर रखा उसे नियम व व्यवस्था के अधीन !
उसी के लिए यह सारा जगत् रचा, पर फल पाने में रहता है पराधीन।।

ईश्वर ने मनुष्य पर किये इतने अधिक उपकार, बनाया पूरे जगत् का स्वामी।
फिर भी मानव तू इतना कृतघ्न कभी ईश्वर के गुण गाता नहीं, निकालता रहता है कमी।।

कहता रहता, यह न दिया, वह न दिया, जब दे दिया इतना सुन्दर शरीर।
आँख, कान, नाक, मुँह, हाथ और पैर, खाने के लिए अन्न और पीने के लिए नीर।।

ऐ कृतघ्नता छोड़, बन कृतज्ञ, दे मन से सदा ईश्वर को धन्यवाद।
जीवन सुखी, शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न और जीने में आवेगा स्वाद।।

जीवमात्र, स्वाभाविक और नैमित्तिक गुणों से प्राप्त करता है ज्ञान।
पशु–पक्षियों में स्वाभाविक, मनुष्य में होता नैमित्तिक गुण प्रधान।।

शुभ कर्मों के साथ, भक्ति में जो आनन्द, वह नहीं किसी में, कहता है खुशहाल।
इन दोनों करते रहो, तो सुख, चैन, आनन्द, धन से हो माला–माल।।

खुशहाल चन्द्र आर्य
180 महात्मा गाँधी रोड़, दोतल्ला, कोलकता–700007
मो. 9830135794

–नवसम्वत्सर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा 19 मार्च पर केन्द्रित कुछ विचार–

सृष्टि व विक्रमी नवसंवत्सर चैत्र-शुक्ल-प्रतिपदा गौरवपूर्ण दिवस

● मनमोहन कुमार आर्य

आगामी नव सृष्टि संवत् एवं विक्रमी संवत् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा तदनुसार 19 मार्च, 2026 को आरम्भ हो रहा है। हमारे पास काल की अवधि की जो गणनायें हैं वह दिन, सप्ताह, माह व वर्ष में होती हैं। यदि सृष्टि की उत्पत्ति, मानवोत्पत्ति अथवा वेदोत्पत्ति का काल जानना हो तो वह वर्षों में बताया जाता है। वैदिक गणनाओं में वर्ष की अवधि सामान्यतः 360 दिन मानी जाती है। लगभग इतनी अवधि पूरी होने पर वर्ष वा संवत्सर बदलते हैं। वर्तमान सृष्टि संवत्सर 1,96,08,53,127 आरम्भ होना है यह दिन विक्रमी संवत् 2083 का प्रथम दिवस होगा। अंग्रेजी वर्ष आरम्भ होने पर इसको मानने वाले नव वर्षारम्भ के दिन उत्सव के रूप में मनाते हैं वह परस्पर शुभकामनाओं का आदान प्रदान करते हैं। उन्हीं के अनुकरण से हमारे कुछ वैदिक व सनातन धर्म के बन्धु इसी प्रकार से एक दूसरे को शुभकामनायें एवं बधाई देने लगे हैं। इस नवसंवत्सर दिन का महत्व यही है कि इतने वर्ष पूर्व सृष्टि, वेद व मानव का आरम्भ हुआ था तथा 2083 वर्ष पूर्व महान पराक्रमी आर्य वा हिन्दू राजा विक्रमादित्य शकों को युद्ध में पराजित कर राज्यारूढ़ हुए थे। महाराज विक्रमादित्य जी की राजधानी उज्जैन मानी जाती है। विक्रमादित्य एक आदर्श राजा थे। उन्हें हम कुछ–कुछ राजा राम के अनुगामी की तरह मान सकते हैं। उनकी स्मृति बनाये रखने के लिए तत्कालीन विद्वानों ने इस संवत्सर को आरम्भ किया था।

हम जिस संसार में रहते हैं वह व समस्त ब्रह्माण्ड ईश्वर से निर्मित व संचालित है। वेदों में ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति सहित मनुष्यों के कर्त्तव्य अकर्त्तव्यों का विस्तृत वा पूर्ण ज्ञान है। हमारी यह सृष्टि बिना कर्त्ता व उपादान कारण के अस्तित्व में नहीं आई है अपितु सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वान्तर्यामी, अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, अजर, अमर, अविनाशी और अनन्तानन्दस्वरूप ईश्वर ही इस सृष्टि का रचयिता है। अतः सृष्टि बनाने का कार्य ईश्वर ने किसी समय विशेष पर आरम्भ किया होगा और किसी विशेष समय पर इस सृष्टि का निर्माण सम्पन्न हुआ होगा। यह भी निश्चित है कि ब्रह्माण्ड वा हमारे सौर्य मण्डल के बन जाने वा इसमें जल, वायु, अग्नि व अन्य सभी आवश्यक पदार्थों की उपलब्धि होने तथा जिस स्थान विशेष (अनेक प्रमाणों से यह स्थान तिब्बत था) पर मानव सृष्टि अस्तित्व में आई, वह भी इस सृष्टि का कोई दिन विशेष रहा होगा। यदि उपलब्ध जानकारी के आधार पर कहें तो उस दिन चैत्र शुक्ल प्रतिपदा का दिन था, यह अनुमान होता है। मनुष्यों की उत्पत्ति के साथ ही ईश्वर को सृष्टि के आदि में उत्पन्न युवावस्था के स्त्री–पुरुषों को जीवन के सामान्य व विशेष व्यवहार करने के लिए भाषा व व्यवहार ज्ञान की भी उपलब्धि वा पूर्ति करनी थी अन्यथा उनका सामान्य जीवन प्रवाह सम्भव न होता। अतः ईश्वर ने इसी दिन, चैत्र माह के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को, चार ऋषियों, अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को, वेदों का ज्ञान देने के साथ इतर मनुष्यों को परस्पर व्यवहार करने के लिए भाषा का ज्ञान भी दिया था, ऐसा अनुमान होता है। बहुत से विद्वान् इस अनुमान व मान्यता से मतभेद रख सकते हैं। ऐसे विद्वान् महानुभावों से हमारा निवेदन है कि वह अपनी मान्यताओं को युक्ति व प्रमाण सहित प्रस्तुत करें जिससे हमारा व अन्य आर्य बन्धुओं का मार्गदर्शन व समाधान हो सके।

आर्य पर्व पद्धति के लेखक पं. भवानीप्रसाद जी का कथन है कि यह इतिहास बन गया कि सृष्टि का आरम्भ चैत्र के प्रथम दिन अर्थात् प्रतिपदा को हुआ था क्योंकि सृष्टि का प्रथम मास वैदिक संज्ञानुसार मधु कहलाता था और वही फिर ज्योतिष में चन्द्र काल गणनानुसार चैत्र कहलाने लगा था। इसी की पुष्टि में ज्योतिष के हिमाद्रि ग्रन्थ में यह श्लोक आया है–

चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु, तदा सूर्योदये सति।।

अर्थात् चैत्र शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन सूर्योदय के समय ब्रह्मा ने जगत् की रचना की। यह भी बता दें कि औरंगज़ेब के समय में भी भारत में नवसम्वत्सर का पर्व मनाने की प्रथा थी। इसका उल्लेख औरंगज़ेब ने अपने पुत्र मोहम्मद मोअज्जम को लिखे पत्र में किया है जिसमें वह कहता है कि काफ़िर हिन्दूओं का यह पर्व है। यह दिन राजा विक्रमादित्य के राज्याभिषेक की तिथि भी है।

भारतीय नवसम्वत् दिवस की यह विशेषता है कि यह ऐसी ऋतु में आरम्भ होता है कि जब न अधिक शीत होता है, न उष्णता और न ही वर्षा ऋतु। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन वातावरण बहुत सुहावना व मनोरम होता है। खाद्यान्न गेहूँ की फसल लगभग तैयार हो जाती है। सभी हरी–भरी वृक्ष व वनस्पतियाँ आँखों को आह्लादित करती हैं। सर्वत्र नये–नये पुष्प अपनी सुन्दरता से एक नये काव्य की रचना करते प्रतीत होते हैं। यह समस्त वातावरण व प्राकृतिक सौन्दर्य अपने आप में एक उत्सव सा ही प्रतीत होता है। यही ऋतु मानवोत्पत्ति के लिए उपयुक्त प्रतीत होती है। यदि अन्य ऋतुओं में मानवोत्पत्ति होती तो हमारे आदि स्त्री व पुरुषों को असुविधा व कठिनाई हो सकती थी। ईश्वर के सभी काम निर्दोष होते हैं अतः यह उसी का प्रमाण है कि मानव सृष्टि उत्पत्ति ईश्वर ने एक सुन्दर व सुरम्य स्थान तिब्बत जहाँ पर्वत व वन हैं तथा जल सुलभ है, की थी। हमें यह अनुभव होता है कि इस दिन हमें अपने आदि पूर्वजों को स्मरण कर स्वयं को उन जैसा ज्ञानी व स्वस्थ व्यक्ति बनाने का संकल्प लेना चाहिये व इसके लिए समुचित प्रयास करने चाहियें।

यदि विश्व के सभी लोग अपने पूर्वाग्रहों को छोड़कर व परस्पर मिल कर उस आदिकालीन स्थिति पर विचार करें तो अविद्या व अज्ञान पर आधारित तथा मनुष्यों के दुःख के प्रमुख कारण मत–मतान्तरों से मनुष्यों को अवकाश मिल सकता है और संसार में एक ज्ञान व विवेक से पूर्ण वैदिक मत स्थापित हो सकता है जिससे संसार में सुख, शान्ति व कल्याण का वातावरण बन सकता है।

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को नवसंवत्सर के दिन ही मर्यादा पुरुषोत्तम राजा रामचन्द्र जी के अयोध्या आकर सिंहासनारुढ़ होने की मान्यता भी प्रचलित है। विद्वान् मानते हैं कि इसी दिन महाभारत युद्ध के समाप्त होने पर राजा युधिष्ठिर जी का राज्याभिषेक हुआ था। आदर्श महापुरुष व वैदिक संस्कृति के अनुरागी रामचन्द्र जी का जन्म दिवस रामनवमी का महापर्व पर्व भी इस दिवस के ठीक नवें दिन नवमी को होता है। आर्यसमाज की स्थापना भी चैत्र शुक्ल पंचमी को हुई थी। यह भी भारत के इतिहास में एक युगान्तरकारी कार्य था जिससे समस्त विश्व के मानवों को ईश्वर व जीवात्मा से सम्बन्धित सत्य व यथार्थ ज्ञान व ईश्वरोपासना की सत्य व प्रमाणिक विधि ऋषि दयानन्द सरस्वती जी के द्वारा प्राप्त हुई थी। अतः ***न केवल चैत्र शुक्ल प्रतिपदा का दिन अपितु चैत्र माह का पूरा शुक्ल पक्ष ही महत्वपूर्ण है।*** इस पर्व को देश व विश्व में मनाया जाना चाहिये। यह भी महत्वपूर्ण है कि किसी भी पर्व को मनाते समय जहाँ आनन्द व उल्लास होना चाहिये वहीं ईश्वर–चिन्तन और अग्निहोत्र यज्ञ का भी अनुष्ठान किया जाना चाहिये क्योंकि यह दो कार्य संसार में श्रेष्ठतम् व उत्तम कर्म हैं। इसके अनन्तर अन्य सभी वेदविहित कार्य किये जाने चाहियें। ऐसा करने से ही परिवार, समाज व देश का वातावरण आदर्श व अनुकरणीय बन सकता है। यह भी आवश्यक है कि किसी भी पर्व पर किसी भी व्यक्ति को सामिष भोजन व मद्यपान किंचित् भी नहीं करना

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

हम जिस संसार में रहते हैं वह व समस्त ब्रह्माण्ड ईश्वर से निर्मित व संचालित है। वेदों में ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति सहित मनुष्यों के कर्त्तव्य अकर्त्तव्यों का विस्तृत वा पूर्ण ज्ञान है। हमारी यह सृष्टि बिना कर्त्ता व उपादान कारण के अस्तित्व में नहीं आई है अपितु सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वान्तर्यामी, अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, अजर, अमर, अविनाशी और अनन्तानन्दस्वरूप ईश्वर ही इस सृष्टि का रचयिता है। अतः सृष्टि बनाने का कार्य ईश्वर ने किसी समय विशेष पर आरम्भ किया होगा और किसी विशेष समय पर इस सृष्टि का निर्माण सम्पन्न हुआ होगा।

गतांक से आगे...

महामृत्युञ्जयमन्त्र

● डॉ. रघुवीर वेदालंकार

पुष्टिवर्धनम्—यह त्र्यम्बक सभी प्रकार से हमारा पुष्टिवर्धक, वृद्धि करने वाला है। परमेश्वर का भक्त सांसारिक दृष्टि से भी पीछे नहीं रहता। परमेश्वर दिन—रात दे रहा है, सभी को सब कुछ दे रहा है। बस ! आवश्यकता है कि हम उसके दान के पात्र बनें। वह कुपात्र को नहीं देगा। संसार में भी कोई भी कुपात्र को, अनधिकारी को, कुछ भी नहीं देना चाहता, परमेश्वर तो क्यों देगा? इसलिए हमें उसका दान प्राप्त करने के लिए सुपात्र बनना होगा परमेश्वर की भक्ति उसे सुपात्र बना देगी। वह किसी भी दृष्टि से पीछे नहीं रहेगा। गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं:—

न मे भक्तः प्रणश्यति। यहाँ **मे** का अर्थ परमेश्वर कर दें तो अर्थ बन जाता है कि परमेश्वर का भक्त नष्ट नहीं होता। उसकी वृद्धि ही होती रहती है क्योंकि वह पुष्टिवर्धक वृद्धि—कारक परमेश्वर का यजन कर रहा है। परमेश्वर से विमुख लोग दुःखी रहते हैं। वे दिन—रात धन के चक्कर पड़कर नाना कष्टों को प्राप्त करते हैं। अवैध तरीके से धन—वैभव कमाते हैं तो वह नष्ट भी हो जाता है। सरकर उसे जब्त भी कर लेती है तथा उस व्यक्ति को सज़ा भी हो जाती है। प्रभु की आज्ञानुसार संसार में अपनी वृद्धि करने वाले को किसी से भी भय नहीं होता क्योंकि वह सत्य के मार्ग पर है। परमेश्वर उसकी वृद्धि में भी सहायक है तथा उसकी रक्षा भी कर रहा है। सबसे बड़ी बात है कि उसका जीवन सुख एवं शान्ति से व्यतीत होता है। इसके विपरीत आचरण वाले व्यक्ति निरन्तर अशान्त रहते हैं। धन—सम्पति होने पर भी उन्हें पूर्ण सुख प्राप्त नहीं होता। जिस प्रकार पकने पर खरबूजे में सुगन्ध उत्पन्न हो जाती है उसी प्रकार प्रभुभक्त का जीवन भी सुगन्ध से पूर्ण हो जाता है। उसका यश ही उसकी सुगन्ध है।

उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर्मुक्षीय—त्र्यम्बक हमें उर्वारुक की भांति मृत्यु के बन्धन से छुड़ा दें उर्वारुक का अर्थ खरबूजा किया जाता है। बेल में लगा रहने पर खरबूजे की तीन गतियाँ होती हैं। (1) रोग आदि के कारण वह बेल पर गल जाता है या सूख जाता है। (2) उसे कच्ची अवस्था में ही तोड़ लिया जाता है। अभी वह पका नहीं है। (3) पकने पर वह स्वयं ही अपनी बेल से अलग हो जाता है। बेल के तन्तु भी उसके साथ ही सूख जाते हैं। इस अवस्था में वह सुगन्धी है। सूँघने पर उसमें से सुगन्ध आती है। इसी सुगन्ध से उसके मीठे या फीके होने की पहचान की जाती है। पका हुआ खरबूजा पुष्टिकारक भी है। इस अवस्था में खरबूजे के बीज भी उससे अलग हो जाते हैं।

बस ! व्यक्ति की भी यही स्थिति है। उसे भी मृत्यु तीन प्रकार से दबाती है। (1) रोगों के द्वारा शरीर क्षीण होने पर मृत्यु तथा जरावस्था शीघ्र आ जाती है। (2) अचानक दुर्घटना आदि में भी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है। यह अकाल मृत्यु है। (3) वृद्धावस्था होने पर ही मृत्यु व्यक्ति को ले जाती है।

वर्तमान को देखें तो अनेक व्यक्ति अनेक प्रकार की व्याधियों से पीड़ित होकर समय से पहले ही घर पर या अस्पतालों में मृत्यु के ग्रास बन रहे हैं। यह हमारे अप्राकृतिक खान—पान तथा अनियमित जीवनचर्या के कारण हो रहा है। अस्पताल खुले हैं। पुनरपि इस प्रकार की मृत्यु को दूर नहीं किया जा रहा है। यह तो तभी होगा जब हम गीता के निम्न श्लोक के अनुसार जीवन व्यतीत करेंगे। श्री कृष्ण कहते हैं:—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य च कर्मसु।
युक्त स्वप्नायबोधस्य योगो भवति दुःख हा।।
(गीता 6.17.)

जो उचित आहार—विहार करते हैं। अपने कार्य भी उचित रीति से धर्मानुसार ही करते हैं तथा ठीक समय पर सोते एवं जागते हैं, वे दुःखों को प्राप्त नहीं करते। ऐसे व्यक्ति रोगादि से ग्रस्त नहीं होते। आज तो सब कुछ उल्टा हुआ है। इसलिए पता नहीं कि मृत्यु कब किसे दबा दे। (2) दुर्घटना से होने वाली मृत्यु पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं। आजकल तो अनेक दुर्घटनाएँ असावधानी से ही हो रही हैं। उन पर नियंत्रण किया जा सकता है। (3) मन्त्र कहता है कि हम वृद्धावस्था के बाद ही यशस्वी मृत्यु को प्राप्त करें। तीसरी स्वाभाविक मृत्यु है, किन्तु वह भी खरबूजे की तरह हो। बेल से टूटने से पहले बेल के तन्तु पूर्णतः सूख चुके होते हैं। बेल भी प्रायः सूख जाती है। हमारा जीवन भी एक खरबूजे की बेल की तरह ही है। विषय भोगों के तन्तु हमारी जीवन बेल में लगे रहते हैं। व्यक्ति उनके द्वारा ही आगे बढ़ता है, पुष्ट होता है, उन्नति करता है। ये विषय भोगों के तन्तु=संस्कार मृत्यु से पहले सूख जाने चाहिएँ। यदि अन्त समय में भी ये मन में जमे रहेंगे तो मृत्यु तो कष्टकर होगी ही, अगला जन्म भी अच्छा नहीं मिलेगा। ये संस्कार ही उसका आधार बनेंगे।

पकने पर खरबूजे के बीज उससे अलग हो गये। खरबूजे को फाड़ने पर वे स्वयं ही पृथक् हो जाते हैं। इसी प्रकार व्यक्ति भी नाना संस्कारों से बँधा हुआ है। ये संस्कार उसके मन में ही निहित हैं। मृत्यु से पूर्व इन्हें समाप्त कर देना चाहिए तभी अमृत की कामना की जा सकती है। इसीलिए मन्त्र में कहा गया है—

मामृतात् मुक्षीय— त्र्यम्बक मुझे अमृत से न छुड़ाए वरन् मेरे मृत्यु के बन्धन को ही काट दे। जीव अविनाशी होकर भी शरीर के कारण जन्म—मरण के चक्कर में पड़ा रहता है। जन्मता है, मरता है। संसार प्रायः इसी चक्कर में फँसा रहता है। यास्क मुनि ने निरुक्त शास्त्र में जीव के मुख से कहलवाया है—

मृतश्चाहं पुनर्जातः जातश्चाहं पुनर्मृतः।

अर्थात् मर कर मैंने पुनः जन्म लिया तथा जन्म लेकर फिर मर गया। बस संसार इसी चक्कर में गति कर रहा है। अमृत=मोक्ष को प्राप्त करके ही इस जन्म—मरण के चक्कर से निकला जा सकता है। यह तो परमेश्वर=त्र्यम्बक की भक्ति से ही सम्भव है। वेद कहता है **यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः** (यजु 25.13) जिसका आश्रय ही मोक्ष अमृत का दाता है तथा जिसको न मानना अर्थात् उसकी उपासना न करना ही मृत्यु आदि दुःखों का कारण है। मन्त्र में त्र्यम्बक से यही प्रार्थना की गयी है। प्रार्थना उपासना के बिना सिद्ध नहीं होगी। इसलिए हमें तीनों लोकों में गति करने वाले तथा सर्वदा रक्षा करने वाले त्र्यम्बक का यजन=संगतिकरण करना चाहिए।

बी—266, सरस्वती विहार,
दिल्ली—110034
मो. 9868144317

☞ पृष्ठ 04 का शेष

सृष्टि व विक्रमी नवसंवत्सर ...

चाहिये। वेदानुसार यह दोनों कार्य अत्यन्त हेय एवं घृणित हैं, मनुष्यों को इनसे बचना चाहिये और देश व राज्य की सरकारों को इनको दण्डनीय बनाने के साथ इन्हें प्रतिबन्धित करने की योजना भी बनानी चाहिये।

हम संसार में यह भी देखते हैं कि संसार में जितने भी मत, सम्प्रदाय, वैदिक संस्कृति से इतर संस्कृतियाँ व सभ्यतायें हैं, वे सभी विगत 3—4 हज़ार वर्षों में ही अस्तित्व में आईं हैं जबकि सत्य सनातन वैदिक धर्म व संस्कृति एवं वैदिक सभ्यता विगत 1.96 अरब वर्षों से संसार में प्रचलित हैं। वैदिक धर्म ही सभी मनुष्यों का यथार्थ धर्म है। यह बात ज्ञान व विवेक पर आधारित, पूर्ण वैज्ञानिक होने के साथ—साथ युक्ति एवं तर्क से भी सिद्ध है। वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण वेदेतर मतों की वैदिक सिद्धान्तों की पोषक मान्यतायें ही स्वीकार्य होती हैं, विपरीत मान्यतायें नहीं। महर्षि दयानन्द ने इस विषय पर सूक्ष्मता से विचार व विश्लेषण किया और पाया कि वेद और वेदानुकूल मान्यतायें ही ग्राह्य एवं करणीय हैं तथा वेदविरुद्ध मत व मान्यतायें आचरणीय नहीं हैं। इस सिद्धान्त का पालन सभी मनुष्यों के लिए उत्तम व आवश्यक हैं। भविष्य में जैसे—जैसे ज्ञान का विकास होता जायेगा तो अवश्य ही संसार के लोग वेद विरुद्ध बातों को मानना छोड़कर सत्य ज्ञान पर आधारित वैदिक मान्यताओं को ही स्वीकार करेंगे। समय परिवर्तनशील है। सत्य हर काल में टिका रहता है और असत्य नष्ट होता जाता है। यही स्थिति अविद्या व अज्ञान पर आधारित व प्रचलित अविद्यायुक्त बातों की भी भविष्य में होगी। **हमें सत्य को ग्रहण और असत्य का त्याग करना है, अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी है तथा सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार और यथायोग्य व्यवहार करना है। यही वेद, ऋषि दयानन्द और सत्यार्थप्रकाश का शाश्वत् सन्देश है।** सत्य पर ही संसार, मनुष्य समाज व सभी व्यवस्थायें टिकी हुई हैं। **सत्यमेव जयते नानृतं।** सत्य की सदा जय होती है असत्य की नहीं। इसी भावना से ईश्वर—जीवात्मा का चिन्तन करने के साथ अग्निहोत्र—यज्ञ करके नवसम्वत्सर पर्व को मनाना चाहिये। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला—2
देहरादून—248001
मो. 09412985121

उत्पत्ति का विज्ञान क्या है?

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

{श्री हरिश्चन्द्र वर्मा जी के अपनी अनन्त यात्रा पर चले जाने के बाद उनके सुपुत्र द्वारा वर्मा जी द्वारा लिखित लेखों की कुछ अप्रकाशित प्रतियाँ 'आर्यजगत्' को भेजी गई थी। समय–समय पर उस सामग्री को आर्यजगत् के पाठकों को परोसा जाता है। 'उत्पत्ति विज्ञान' पर वर्मा जी का लेख धारावाहिक रूप में प्रस्तुत है।—सम्पादक}

कतिपय साइंसवेत्ता, डार्विन के विकासवाद के अनुसार ही मनुष्य एवं अन्य प्राणियों की उत्पत्ति मानते हैं, जो बिल्कुल ठीक नहीं है। कहते हैं—हाथी करोड़ों वर्ष पहिले सूअर जैसा था। क्रमशः वही हाथी होने लगा। यदि ऐसी बात है, तो उस काल में सूअर किस रूप में था ? सृष्टि काल में उत्पन्न कई जाति के प्राणी लुप्त हो गये हैं—जैसे—डाइनासोर। परिवर्तन और विकास का नियम ठीक है, तभी तो जिस प्राणी का जो बीज था, वह उसी रूप में विकसित हुआ। परिवर्तन का अर्थ यह नहीं है कि ऊँट को घोड़ा, बाघ को बकरी और बकरी को बाघ बना दे। हाँ ! बीज् आम से कलमी आम मनुष्य बना सकता है, किन्तु उसके 3–4 वर्ष के बाद पुनः वह कलमी आम तुख्मी जैसा होने लगता है। बाघ के वीर्य से कुत्ते को बाघ जैसा बनाया जा सकता है, किन्तु कुत्ता बाघ नहीं बन सकता। खच्चड़ बन सकता है, किन्तु उसका वंश नहीं चल सकता। साइंस एक प्राणी से दूसरे प्राणी को उत्पन्न कर सकता है, किन्तु कृत्रिम प्राणी प्राकृतिक जैसा नहीं हो सकता।

इस सारे संसार को जिन पंचतत्वों से जीवन प्राप्त हो रहा है, उस जीवन को कोई मनुष्य बना नहीं सकता, अतः कृत्रिम और प्राकृतिक में अंतर है। कृत्रिम नाशवान् है और जीवन दाता 'आत्मा' तथा उत्पादक, पालक और सबका धारणकर्त्ता सर्वशक्तिमान् परमेश्वर 'अमर' है। औषधियों से रोगियों को निरोग किया जाता है, किन्तु उन औषधियों का मौलिक उपादान प्राकृतिक सृष्टियों से ही प्राप्त किया जाता है।

ईश्वरीय प्राकृतिक सृष्टियों का भेदपाना बहुत कठिन है। मनुष्य उत्पत्ति के सम्बन्ध में उन वैज्ञानिकों का मत ठीक नहीं है।

मिट्टी कैसे बनी ? नदियों के बालू एक जैसे नहीं होते। गंगाजल कीटाणुनाशक और उसका जल शुद्ध एवं बालू क्यों सफेद, बारीक है? समुद्र का बालू खैरारंग और उसका जल नमकीन क्यों है? पंचतत्व जीवन उपयोगी क्यों, कैसे बन गया? जब सृष्टि का उपादान कारण अनादि है, तब यह सृष्टि भी अनादि काल से बनती, बिगड़ती, बिगड़ती और बनती रहती है। ऋग्वेद में भी मंत्र है कि **"धाता परमेश्वर ने पूर्वसृष्टि के समान ही, सूर्य और चन्द्रमा तथा पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्गलोक की रचना की।"**

यह स्वर्ग लोक सूक्ष्म जगत् है, जो समाधि द्वारा मुक्त जीव ब्रह्मानन्द को प्राप्त होता है। वैज्ञानिक हैरान हैं, जिन्हें मृत्यु के बाद पुनर्जीवन मिल जाता है, उदाहरण के लिये—***डिसकवरी चैनल*** पर दि. 24.8.04 को रात 9 बजे के बाद प्रत्यक्ष दिखाया जा रहा था। कई ऐसी घटनायें घटी हैं जैसे मृत्यु के दो घन्टे बाद, मृत व्यक्ति पुनः जीवित हो गया, जब उससे पूछा गया कि आप कहाँ थे ? किस स्थिति में थे? तब वह बोला कि ऐसा लग रहा था कि हम किसी इन्द्रधनुष जैसे अति सुन्दर प्रकाश में प्रवेश कर रहे हैं, जो भौतिक नहीं था पुनः मुझे ऐसा लगा शायद अपनी आत्मा थी कि तुम वापस चलो, बस मैं आ गया।

मृत्यु के बाद एक व्यक्ति की आत्मा यह देख रही थी कि हमारे सामने डॉक्टर खड़े हैं, आप्रेशन की सामग्री यन्त्र अमुक–अमुक जगह रक्खी हुई थी। उस मृत व्यक्ति के पुनः जीवित हो जाने पर पूछा गया, तब उसने जो–जो बातें कहीं वे सब सत्य थीं। सारांश यह कि मृत्यु के बाद आत्मा कुछ देर तक अपने शरीर के इर्द गिर्द में ही रहती है, उसके बाद वह प्रकाश के माध्यम से पुनर्जीवन के लिये गर्भ धारण करता है। किन्तु जो योगाभ्यासी, समाधि–सिद्ध हैं, अथवा जिनकी आत्मा पवित्र रहती है, वे देहान्त के बाद स्वर्गलोक में अर्थात् परमेश्वर के अभौतिक प्रकाश के आनन्द में प्रवेश कर जाते हैं और उसमें जो उन्हें आनन्द मिलता है, वह वाणी द्वारा प्रकट नहीं किया जा सकता।

अब आइये भौतिक जगत् में : यह अन्तरिक्ष खाली नहीं है, वह अपार उपादानों एवं सृष्टियों की विभिन्न शक्तियों से पूर्ण है जो परस्पर एक दूसरे से सम्बन्ध रखती हैं किन्तु अन्तिम सम्बन्ध उस सर्वशक्तिमान परमेश्वर से है, जो सर्वत्र परिपूर्ण है। उस परमेश्वर को समझने के लिये उनकी अनन्त रहस्यपूर्ण रचनाओं की क्रिया ही उनके अस्तित्व को प्रमाणित कर रही हैं।

उसकी महान् शक्तियों ने समुद्रादि के जीवों को विचित्र से विचित्र रूपों में उत्पन्न किया है। क्या किसी ने देखा था कि अमुक प्राणी से, अमुक प्राणी कैसे बनते गये? क्या अरबों वर्ष पहिले के जीव–विज्ञान का इतिहास *'कम्प्यूटर'* बता सकता है कि प्राणियों, मनुष्यों और वृक्ष वनस्पतियों के बीज कैसे उत्पन्न हो गये ? मनुष्य के रोने और हँसने से जो आँसु निकलते हैं, वे कैसे निकलते हैं। यदि दोनो आँसुओं को मिला दिया जाए, तो क्या वैज्ञानिक बता सकते हैं कि कौन रोने और कौन हँसने का है ? रोने का किस समय निकला था और हँसने का किस समय ? मनुष्य का पसीना कैसे बनता है और वह बालों के सहारें कैसे निकलता है ? प्रत्येक जीव के गुण, कर्म, स्वभाव, पृथक्–पृथक् क्यों हैं ? सृष्टि अपनी मर्यादा में क्यों है? मनुष्य से इतर प्राणियों की इन्द्रियाँ 1 या 2 क्यों लुप्त रहती हैं ? सर्प जब देखता है तब सुनता नहीं और जब सुनता है, तब देखता नहीं। प्रत्येक पशु पक्षी में प्रेम, प्रणय और मैथुन करने का ज्ञान कैसे हो गया ? प्रत्येक प्राणी की मादा अपने बच्चों से प्यार क्यों करती है ? पशु, पक्षियों की बोली आज तक कोई क्यों समझ नहीं पाया ?

> **जैसा जिसका बीज रहता है वह उसी जैसा जन्म लेता है। प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ मनुष्यों की उत्पत्ति कैसे हो गई? यदि मनुष्य के पूर्वज पशु होते तो उसके भी दूध के दाँत नहीं गिरते, क्योंकि पशुओं के दूध के दाँत नहीं गिरते, किन्तु मनुष्य के दूध के दाँत गिर जाने के बाद पुनः जीवन भर के लिये नये दाँत उत्पन्न हो जाते हैं, उनके टूटने पर पुनः दाँत नहीं होते, ऐसा क्यों होता है? पशुओं को अपने माता–पिता का ज्ञान बचपन में ही रहता है, उसके बाद वे भूल जाते हैं। पशु बिना सिखाये जल में तैरने लगते हैं, किन्तु मनुष्य बिना बताये उसमें डूबने लगता है।**

जैसा जिसका बीज रहता है वह उसी जैसा जन्म लेता है। प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ मनुष्यों की उत्पत्ति कैसे हो गई? यदि मनुष्य के पूर्वज पशु होते तो उसके भी दूध के दाँत नहीं गिरते, क्योंकि पशुओं के दूध के दाँत नहीं गिरते, किन्तु मनुष्य के दूध के दाँत गिर जाने के बाद पुनः जीवन भर के लिये नये दाँत उत्पन्न हो जाते हैं, उनके टूटने पर पुनः दाँत नहीं होते, ऐसा क्यों होता है? पशुओं को अपने माता–पिता का ज्ञान बचपन में ही रहता है, उसके बाद वे भूल जाते हैं। पशु बिना सिखाये जल में तैरने लगते हैं, किन्तु मनुष्य बिना बताये उसमें डूबने लगता है। मनुष्य को रात को नहीं दिखता, किन्तु माँसाहारी निशाचरों को रात में क्यों दिखलाई देता है? जलचर, नभचर, स्थलचर आदि पशु–पक्षियों की उत्पत्ति क्यों हुई ?

मिट्टी में जिस जाति का बीज पड़ता है, वह एक ही मिट्टी से, जल, वायु आदि के योग से उस मिट्टी से अंश लेकर अपने जैसा वृक्षाकार होने लगता है। नीम के बीज से नीम जैसा तीतापन के परमाणुओं से ही अंश ग्रहण करके बड़ा होता है। गन्ने से गन्ने जैसा मीठापन उसी मिट्टी से प्राप्त करता है अतः जो जैसा बीज होता है, वह उसी प्रकार के गुणों को उसी मिट्टी से प्राप्त कर उत्पन्न होता है। यह मिट्टी में जल, वायु और सूर्य चन्द्रादि का योग कैसा है ? जिनसे असंख्य जीवों, वृक्षों, तृण, कन्द, मूल, फल, फूल, अन्न, सब्जियों, औषधियों के लिये विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों की सृष्टि हुई और होती है, यह सब किस विज्ञान की देन है? और पंचतत्वों की बुद्धिपूर्वक सृष्टि क्यों व किसलिये हुई थी ? मानव, मानवी का सांचा का आदि–निर्माण किसने किया था? क्या यह सब स्वयं हो गया? स्वयं तो मुख में भोजन तक नहीं जाता। अपने आप तो एक यन्त्र भी नहीं बन सकता। आश्चर्य लगता है मस्तिष्क के भीतर का वैज्ञानिक गठन देखकर ! विश्वकर्मा परमात्मा ने बिना किसी यन्त्र के कैसे सब निर्माण किया ?

हाँ ! यह सत्य है कि मनुष्य पहले पैदल चलता था। वेदोत्पत्ति हो चुकी थी, उसके बाद ऋषि मनु जी ने

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

आर्यसमाज विश्व की औषधि है

● ओम प्रकाश आर्य

आज दुनिया तीव्र गति से बदल रही है। इस बदलते युग में स्वाध्याय, चिन्तन, संस्कार, रिश्ते–नाते, संवेदना, सुहृदता, पारिवारिक सम्बन्ध सब दूर होते जा रहे हैं। व्यक्ति के हाथों से पुस्तकें छूट गई हैं। पुस्तकालयों में धूल जम रही है। अपने जीवन का अध्ययन बन्द हो गया है। ईश्वर–चिन्तन भौतिकवाद की चकाचौंध में दब गया है। घरों में संस्कार–शाला में ताला लग गया है। रिश्ते–नाते भी अनजाने हो गए हैं। संवेदना की सरिता में जल नहीं रहा। सुहृदता में सद्भाव समाप्त। पारिवारिक सम्बन्ध एकल स्वरूप में सिकुड़ता जा रहा है। इसके चलते आज मानव अशान्ति, रोगग्रस्त, अनिद्रा, बेचैनी, तनाव का शिकार होता जा रहा है। किसी को किसी के पास बैठने का समय नहीं रहा। वृद्धों की स्थिति तो और चिन्ताजनक है। सबकुछ दिखावा, आडम्बर, पाखण्ड, शोर–शराबा, प्रदूषण का रूप धारण करता जा रहा है। ईश्वर तो पैसे का सौदा हो गया है।

इस बदलते परिवेश में भौतिकवादी सुख–सुविधाएँ चरमोत्कर्ष पर पहुँचने के लिए दिन–प्रतिदिन अग्रसर हो रही हैं। विश्व धरातल को छोड़कर केवल आकाश की ओर शून्यता में उन्नति खोज रहा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादशसमुल्लास में लिखा है–

> "जब बहुत सा धन असंख्य प्रयोजन से अधिक होता है तब आलस्य, पुरुषार्थहीनता, ईर्ष्या, द्वेष, विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता है। इससे देश में विद्या सुशिक्षा नष्ट होकर दुर्गुण और दुष्ट व्यसन बढ़ जाते हैं।"

मद्य–मांसादि सेवन भी इसी के अन्तर्गत वृद्धि को प्राप्त होता है। कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में इसका प्रभाव परिलक्षित हो रहा है। केवल भौतिक उन्नति से शान्ति व आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती, उसके लिए वेद से जुड़ना पड़ेगा। वेद से पृथक् होकर मानव का जीवन आनन्द से रहित होगा। **"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"** का उद्घोष मानव को श्रेष्ठ बनाने के लिए है। यहाँ श्रेष्ठता को महत्त्व दिया गया है। यदि मनुष्य श्रेष्ठ नहीं बनेगा तो भौतिक सुख–साधन सुख की जगह दुःख देने वाले सिद्ध होंगे। श्रेष्ठता परमावश्यक है।

सर्वतोभावेन उन्नति में भावी पीढ़ी को क्या परोसा जा रहा है यह सबसे अधिक चिन्ता का विषय है। सम्प्रति हर हाथ में मोबाइल है। बच्चा उससे अछूता नहीं रह सकता। उसमें उलटा–सीधा परोसने वाला आखिर व्यस्क व्यक्ति ही तो है। उसका कुप्रभाव भावी पीढ़ी पर क्या पड़ेगा ? उससे कोई लेना–देना नहीं। यह तो आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है जो इस पर चिन्तन–मनन करती है, भावी पीढ़ी के भविष्य को देखती है। शेष लोगों को तो कोई मतलब नहीं है। वेद, योग, यज्ञ, ईश्वर, संस्कार, धर्म, स्वाध्याय, गुरुकुलीय शिक्षा, मोक्षविषय, दर्शन, ध्यान, चिन्तन–मनन का सन्देश, प्रचार–प्रसार आर्य समाज ही करता है इसलिए आर्य समाज ही विश्व के लिए औषधि है। इस औषधि के अलावा और किसी विधि से मानव का कल्याण संभव नहीं है। विश्वगुरु का सपना यही साकार कर सकता है। कारण यह है कि वेद को ईश्वरीय वाणी अन्य कोई नहीं मानता। आर्य समाज ही पूर्ण विश्वास के साथ इसका प्रचार–प्रसार करता है।

आज विश्व में मानव–निर्माण को छोड़कर सब कुछ तैयार हो रहा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने मानव–निर्माण के ऊपर बहुत बल दिया है। प्रातः जागरण से लेकर रात्रि–शयन तक आदर्श दिनचर्या का निर्देश किया है। यहाँ तक कि बालक के उत्पन्न होने से पूर्व और जीवन समाप्ति तक का विधि–विधान का उल्लेख कर मानवमात्र को वेदमार्ग अपनाने पर बल दिया है। यह सब चर्चा केवल मानव को उत्तम बनाने के लिए की है। उन्होंने त्याज्य ग्रन्थों को न पढ़ने–पढ़ाने और परीक्षा करके सत्याधारित ग्रन्थों के पठन–पाठन पर ज़ोर दिया है जिससे कि मानव सुख और आनन्द के साथ जी सके। इसके लिए धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष जीवन का उद्देश्य बताया है। ये सारी चीज़ें आर्ष ग्रन्थों के पठन–पाठन से संभव हैं। इस दृष्टि से सम्प्रति शिक्षा–जगत् में आर्ष ग्रन्थ पढ़ाए ही नहीं जा रहे हैं फिर जीवन में दुःख–तनाव होगा ही। आर्य समाज ही इस दिशा में चिन्तनशील रहता है और गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति को फिर से प्रचलित करने के लिए प्रयत्न करता है। मनुष्य धन तो कमा रहा है किन्तु उस धन को केवल वैभव–विलास में लगाने में अपनी शान समझता है। आर्यों के सतत् प्रयास से आर्य समाज का प्रचार पूरे विश्व में हुआ है। वह केवल मानव को मानव बनाना चाहता है। मानव तभी मानव बनेगा, जब उसका निर्माण वैदिक विधि–विधान से किया जाएगा। मनुष्य सब कुछ प्राप्त करके भी अन्दर से अशान्त है। यही अशान्ति तनाव को जन्म देती है। वैदिक धर्मी मनुष्य कुटिया में रहकर भी प्रसन्न था और अवैदिक धर्मी मनुष्य महल में रहकर भी नाना तनावों से व्यथित हो रहा है।

"आनन्दस्रोत बह रहा पर तू उदास है"–आर्य समाज को छोड़कर इस महान् सन्देश को कोई समझ नहीं पा रहा है। वह स्रोत वेद है जिसकी निकटता मनुष्य को आनन्दसागर की ओर ले जाती है। मत–पन्थों–सम्प्रदायों के जाल में फँसकर मनुष्य अपने जीवन को व्यर्थ ही नष्ट कर डालता है। इसी कारण महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखते हैं–

> "जो उन्नति करना चाहो तो आर्यसमाज के साथ मिलकर उसके उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिए, नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा।"

यह हाथ न लगना ही इस बात की ओर संकेत कर रहा है कि जीवन व्यर्थ नष्ट हो जाएगा। वेदपथ पर चलो। यह ईश्वरीय मार्ग है जो पूरे विश्व के लिए है। आर्य समाज सार्वभौमिक विचार रखता है।

एक देश दूसरे देश से लड़ता है, एक जाति दूसरी जाति से घृणा करती है, एक मत दूसरे मतावलम्बी को देखना नहीं चाहता। एक धनी राष्ट्र कमज़ोर राष्ट्र को दबाकर रखना चाहता है। एक सम्प्रदाय हिंसा को ही धर्म मानता है। एक पन्थ पूरे विश्व पर वर्चस्व स्थापित करना चाहता है। नारी जगत् की अलग ही समस्या है। स्वार्थी लोगों की कमी नहीं है। भौतिकता की आँधी ने पर्यावरण को बिगाड़ा है। असन्तुलित प्रकृति में आए दिन विनाशकारी घटनाएँ घटित हो रही हैं। इन सबका समाधान वेद है जिसको आधार मानकर आर्य समाज पूरे विश्व को उत्तम बनाने के लिए प्रयत्न करता है। यह मत, पंथ, सम्प्रदाय नहीं है, यह तो हर समस्या का समाधान करता है। यदि विश्व के मानव वेदपथ पर चलने लगें तो विश्व में कोई समस्या रहे ही नहीं। यह ऐसी औषधि है जिसका अनुपालन कर मानव हर समस्या से मुक्त हो सकता है। **'आओ, चलो वेदों की ओर।'**

– आर्य समाज रावतभाटा
वाया कोटा (राजस्थान)

इस बदलते परिवेश में भौतिकवादी सुख-सुविधाएँ चरमोत्कर्ष पर पहुँचने के लिए दिन-प्रतिदिन अग्रसर हो रही हैं। विश्व धरातल को छोड़कर केवल आकाश की ओर शून्यता में उन्नति खोज रहा है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादशसमुल्लास में लिखा है-
"जब बहुत सा धन असंख्य प्रयोजन से अधिक होता है तब आलस्य, पुरुषार्थहीनता, ईर्ष्या, द्वेष, विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता है। इससे देश में विद्या सुशिक्षा नष्ट होकर दुर्गुण और दुष्ट व्यसन बढ़ जाते हैं।"

प्रभु ! मेरे जीवन को जीवन बना दो

हृदय से मेरे भीरुता भय भगा दो।
कहाँ तुमको ढूँढ़ूँ, कहाँ तुमको पाऊँ,
मिलने के साधन तो अपना बता दो।। प्रभू मेरे........
तुम्हारे बनें, तुमको अपना बना लें,
मिलो जिस तरह से वह मार्ग बता दो।। प्रभु मेरे........
उबारो मुझे तुम पकड़ करके कर को,
आभा की ज्योति का दीपक जला दो।। प्रभु मेरे........

गंगा प्रसाद उपाध्याय

यज्ञ रूप प्रभु हमारे

● भद्रसेन

यज्ञ और यज्ञ–प्रार्थना के पश्चात् सभी आगन्तुक यज्ञशाला से हाल में आकर बैठ गए। तब सर्वप्रथम प्रभुभक्ति का एक मधुर भजन हुआ। आर्यसमाज विक्रमपुरा के मन्त्री श्री इन्द्रजीत जी तलवाड़ ने आगामी कार्यक्रम बताने से पूर्व कहा–आज डी.ए.वी. इंजीनियरिंग कॉलेज के छात्र–छात्रायें अपने प्राध्यापकों और प्राचार्य कोछड़ जी के साथ यहाँ सत्संग हाल में विराजमान हैं। मैं आर्यसमाज की ओर से आप सभी का स्वागत, अभिनन्दन करता हूँ। आप सब अनेक बार भगवान के घर कहलाने वाले धर्मस्थलों पर जाते रहते हैं। कहीं किसी प्रकार के रूप, आकार के प्रतिष्ठित देव को देखते हैं और कहीं किसी और प्रकार के। मेरी तरह आप भी साईंस से जुड़े हुए विद्यार्थी हैं। विज्ञान वाले जब किसी वस्तु को देखते हैं, तो उसको गहराई से समझने का यत्न करते हैं। ऐसी स्थिति में कई बार अनेक प्रश्न भी उभरते हैं। वैसी ही इस समय मेरी कुछ स्थिति है, हो सकता है आपके मन में भी यह बात उठती हो क्योंकि यज्ञ के अन्तिम भाग में गाया जा रहा था–**'यज्ञ रूप प्रभु हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए।'** क्या जो अभी यज्ञ किया गया, उसी रूप वाला, वैसा ही हमारा प्रभु है, जैसा कि गाया जा रहा था? हाँ यह ध्यान रहे, कि यज्ञ प्रक्रिया से, साईंस के नियम के अनुसार, ऐसे–ऐसे परिवर्तित–परिणत होते हुए सुगन्धी होती है; फैलती है। अतएव यज्ञ को जल–वायु आदि पदार्थों का शोधक भी कहा जाता है। अब आपके सामने होशियारपुर से आए श्री भद्रसेन जी अपने विचार रखेंगे। जो कि वेदों और दर्शनों के आचार्य हैं। उनसे निवेदन है कि हो सके तो उभारे गए प्रश्न–**"यज्ञ रूप प्रभु"**–पर प्रकाश डालने की भी कृपा करेंगे।

ओ३म् की लम्बी ध्वनि को गुँजाने के पश्चात् प्रवक्ता ने सभी को सम्बोधित करते हुए कहा–मान्या महिलाओं ! और श्रद्धेय सज्जनों ! आप सब का यहाँ आने पर अभिनन्दन और स्वागत है। आइए! इस उभारे गए प्रश्न पर गहरे पानी पैठ कर कुछ विचार करें। यहाँ सबसे पहले यह ध्यान देने वाली बात है कि प्रश्न में उभरा शब्द वेद से आया है। वैसे भी यहाँ सारा यज्ञ का कार्यक्रम वेद के मन्त्रों से ही हुआ है, अतः पहले वेद पर कुछ विचार करते हैं।

वेद विचार–वेद का अर्थ है=ज्ञान, समझ और हमारा हर कार्य, व्यवहार भी ज्ञान से ही हो सकता है, होता है। यन्त्र, मशीनरी का प्रयोग ज्ञान के बिना बिल्कुल भी नहीं हो सकता। हाँ, पशु, पक्षी तो अपने जन्म के साथ ही ज़रूरत का स्वाभाविक ज्ञान लेकर आते हैं। जैसे कि तैरने का, पर हम मनुष्य ऐसा ज्ञान लेकर नहीं आते। किसी न किसी निमित्त=सहयोगी के सहयोग से हमें ज्ञान आता है। जिसको हम गुरु, शिक्षक, टीचर आदि कहते हैं अतः मनुष्यों का ज्ञान, समझ नैमित्तिक=निमित्त=सहायक से होने वाला है।

ज्ञान का प्रादुर्भाव–आर्य समाज तथा सारे भारतीय शास्त्रों की यह दृढ़ धारणा है, कि सृष्टि के शुरु में जब मनुष्य हुए तब उनको ज़रूरत का ज्ञान देने वाला केवल और केवल ईश्वर ही था तभी तो योग दर्शनकार ने कहा है–(**स एषः पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवछेदात्**–1,26) अर्थात् नित्य ईश्वर ही सर्गारम्भ में ज्ञान का दाता गुरु था। ईश्वर का दिया वह ज्ञान वेद ही है। अतः इस दुनिया और वेद, इन दोनों का, कर्त्ता एक ही है, तभी तो इन दोनों में एकरूपता मिलती है। जैसे भूगोल तथा भूगोल पुस्तक में एक सा होना सचाई की पहचान है, इसी दृष्टि से वेद ने कहा है–**देवस्य पश्य काव्यम्**–अथर्व. 10,8,32। तभी तो जैसा हम सूर्य को देखते हैं, वैसा ही वेद में उसका वर्णन है। इन वेदों में यज्ञ के करने का विधान है। उसी के अनुरूप थोड़ी देर पूर्व यज्ञ का एक रूप आपके सामने आया। वेदों में यज्ञ शब्द नामपद (संज्ञा) और क्रियापद (क्रिया) के रूप में सैंकड़ों–सैंकड़ों बार आता है और वहाँ यज्ञ का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

यज्ञ–शब्दार्थ–यज्ञ शब्द यज् धातु से बनता है जो कि देवपूजा, संगतिकरण और दान इन तीन अर्थों वाली है। वैसे धातु शब्द का अर्थ है, किसी को धारण करने वाला अर्थात् कच्चा माल, मैटर। जैसे हमारे वर्तने के पदार्थ किसी न किसी कच्चे माल से बनते हैं। उदाहरण के रूप में कच्चा माल रूपी लकड़ी आदि जिस पेड़ आदि की जैसी होती है, उससे बनने वाली चीज में भी वे ही गुण मिलते हैं। यही शब्दों की भी बात है, बोले जाने वाले शब्दों के बारे में शब्द पारखी कहते हैं कि यज्ञ–(यज्+न) शब्द अपनी यज् धातु के अनुसार कहीं तीनों, कहीं दो और कहीं किसी एक अर्थ को अवश्य धारण करता है। **देवपूजा** का भाव है–दिव्य, अनोखे, प्रकाश करने वाले की पूजा=आदर, मान, सत्कार, आज्ञा पालन करना। **संगतिकरण**=अपेक्षित का मिलान जैसे रसोई में बनने वाली चीज में अपेक्षित का मिलान करते हैं। **दान**=देना। अभी हमने जो यज्ञ किया, उसमें यजमान–यज्ञ कराने वाले पुरोहित, ब्रह्मा आदि को मान देता है। वहाँ यज्ञ के पात्र, समिधा (लकड़ियाँ), घृत, हवन सामग्री का संगति करण=संग्रह, मिलान होता है। तब समिधा, घृत, सामग्री की आहुति अग्नि में दी जाती है। इन अर्थों के लागू होने से इस किए गए कर्म को यज्ञ कहा गया है और यह एक धार्मिक कर्म है।

> **यज्ञ शब्द यज् धातु से बनता है जो कि देवपूजा, संगतिकरण और दान इन तीन अर्थों वाली है। वैसे धातु शब्द का अर्थ है, किसी को धारण करने वाला अर्थात् कच्चा माल, मैटर। जैसे हमारे वर्तने के पदार्थ किसी न किसी कच्चे माल से बनते हैं। उदाहरण के रूप में कच्चा माल रूपी लकड़ी आदि जिस पेड़ आदि की जैसी होती है, उससे बनने वाली चीज में भी वे ही गुण मिलते हैं। यही शब्दों की भी बात है, बोले जाने वाले शब्दों के बारे में शब्द पारखी कहते हैं ।**

हमारे दर्शनों में छठा, दर्शन मीमांसा माना जाता है, जिसका अर्थ है–विचार, विश्लेषण, विवेचन करना। इसके प्रणेता जैमिनि मुनि हैं। इसका पहला सूत्र है–**अथातो धर्म जिज्ञासा** अर्थात् हम धर्म को जानना चाहते हैं। अगले सूत्र में उत्तर दिया है, कि जो वेद कहे, वह भला करने वाला कर्म ही धर्म है। इस दर्शन के पहले अध्याय में वेद के स्वरूप का विचार है और आगे फिर सारे में यज्ञ प्रक्रिया का विस्तृत चित्रण है अर्थात् मीमांसा के अनुसार वेद में सबसे अधिक यज्ञ का वर्णन है। ऐसा अन्य अनेक शास्त्र भी मानते हैं।

अतः सामान्यतः भलाई करने वाले कर्म का नाम यज्ञ है। तभी तो यह कहा जाता है–'**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म**' शतपथ 1,7,1,5। जैसे यह यज्ञ–हवन सुगन्धि से सबका भला करता है। बहुत जगह लंगर के लिए **'जग'** शब्द चलता है। विशेषतः गाँवों तथा पहाड़ों में जग शब्द बोला जाता है। चारों वेदों में से दूसरे यजुर्वेद के नाम में भी यज् धातु का अंश है और इस वेद में सबसे अधिक यज्ञ का विस्तृत रूप मिलता है। ऋग्–यजु– अथर्व में पुरुष सूक्त अध्याय वाले मन्त्र हैं। वहाँ सृष्टि प्रक्रिया को यज्ञ नाम दिया गया है, तभी तो वहाँ आया है–**"यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत" वसन्तो अस्यासीदाज्यम्**–ऋ–10,90,6, य.–31,14 जैसे भोजन के पकवान आदि में घृत रूप, स्वाद, गुण देता है, ऐसे ही जगत् रचना में वसन्त ऋतु घी की तरह योगदान देती है। तभी तो इसी ऋतु में फूल, फल आदि अधिक होते हैं। सृष्टि प्रक्रिया के यज्ञ नाम की दृष्टि से ही–**"इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा"** अथर्व 2,35,5 मन्त्र में चित्रण है कि विश्वकर्मा ने इस यज्ञ को रचा है और तभी तो यह कहा जा रहा है–**"इयं समित् पृथिवी द्यौ द्वितीया"**–अ.–11.5.4. अर्थात् इस सृष्टि यज्ञ की पहिली समिधा पृथ्वी है और द्युलोक दूसरी.......आदि।

यज्ञ का विविधात्मक स्वारस्य यजुर्वेद के 18 वें अध्याय के पहले मन्त्र से 29 मन्त्र तक प्राप्त होता है। वहाँ सभी मन्त्रों में–**यज्ञेन कल्पन्ताम्** की टेक है। इनमें यज्ञ शब्द तृतीया=साधन, करण, औजार, इन्स्ट्रूमेंट, सहायक, साधक होने वाले के रूप में आया है, अर्थात् जिसके द्वारा कुछ हो। कल्पन्ताम् का अर्थ है–किसी को शक्तिशाली बनाना, तरोताजा करना क्योंकि यह **क्लृपू सामर्थ्ये** धातु से सिद्ध होता है, जैसे दूध, दही, फल आदि से जब किसी का कायाकल्प करते हैं, तो वह उस ढंग से पहले की अपेक्षा सशक्त, सक्षम हो जाता है। इन 29 मन्त्रों में यज्ञ शब्द के

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 08 का शेष

यज्ञ रूप प्रभु हमारे

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने–ईश्वर, धर्म, सदाचार, पशुपालन विद्या, गणित, कृषि विज्ञान आदि अनेक अर्थ दर्शाए हैं।

यज् धात्वर्थ–यज् धातु का पहला अर्थ देवपूजा है। देव शब्द का सबसे अधिक प्रयोग परमात्मा के लिए हुआ है। वह प्रकाश आदि का जहाँ देने वाला है, वहाँ अपने कार्यों, प्रभावों, गुणों से अनोखा भी है और वही सबसे अधिक पूज्य, मान्य, उपासनीय भी है अतः सबसे बड़ा जग को चमकाने, चलाने, देने वाला=देव परमात्मा ही है।

अतः यज्ञ शब्द का एक अर्थ ईश्वर भी है। तभी वेद का यह कहना चरितार्थ हो सकता है, कि–**अयं यज्ञो विश्वस्य भुवनस्य नाभिः** –{अ.–9,10,14} इस सारे उत्पन्न हुए/होने वाले प्राकृतिक जगत् का नाभि=धारक=पोषक, केन्द्र, मूलस्रोत यह यज्ञ वाच्य ही है। ईश्वर को मानने वाले सभी यह स्वीकार करते हैं कि **"जन्माद्यस्य यतः"** {विदान्त–1,1,2} अर्थात् दुनिया बनाना और बना कर चलाना बस उसी का काम है। **मूलतः इस मन्त्र में उत्पत्ति के केन्द्र को यज्ञ कहा जा रहा है।** बहुत सारे श्रद्धावश इस मन्त्र को अग्निहोत्र नामक यज्ञ अर्थ में लेते हैं पर यह देवयज्ञ भुवन का नाभि (धारक, पोषक) नहीं हो सकता है। पूर्व प्रतिपादित ईश्वर भी यज्ञ का वाच्य है, इसका पोषक यह विचार भी हो सकता है अर्थात् यज्ञ का एक अर्थ परमात्मा मानने पर ही–**तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतः**–य. 31,7 ऋ.10,90,9, अ. 19,6,13, में वेदों का प्रादुर्भाव जिस यज्ञ से कहा है। वह यज्ञ केवल परमात्मा ही हो सकता है क्योंकि अन्यत्र वेद **{प्र नूनं ब्रह्मणस्पतिर्मन्त्रं वदत्युक्थ्म्।** ऋ. 1,40,5, य. 34,57– **अपूर्वेणेषिता वाचः** –अ.10,8,33, **स पर्यगात्.** ......**याथातथ्यतोऽर्थान् व्यद्धात्.**–य. 40–8. **बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रे**.......ऋ. 10,71, 1, **देवस्य पश्य काव्यम्**–अ. 10,8,32, **यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः**–य. 22,2, **स्तुता मया वरदावेदमाता**–अ. 19,71,1 **शास्त्रयोनित्वात्**–वेदान्त–1,1,3. **ब्रह्म अक्षर समुद्भवम्**–गीता–3,15, **यस्माद्दृचोऽपातक्षन्**–अ.–10,7,20} में तथा अन्य भारतीय साहित्य में वेद को ईश्वरीय ज्ञान के रूप में प्रतिपादित किया गया है, साधा गया है। अतः यज्ञ शब्द का सबसे प्रमुख अर्थ वाच्य परमात्मा भी है। इसी दृष्टिकोण से यह गाया जाता है–**यज्ञ रूप प्रभु हमारे**–इसके साथ रूप शब्द तुल्य अर्थ में लेने पर अग्निहोत्रात्मक यज्ञ की तरह प्रभु ही सबसे अधिक सुगन्धि, भलाई आदि का कर्त्ता है।

यज्ञ का एक और अर्थ पुरुष, जीव, जीवन भी है इसीलिए उपनिषद् के ऋषि ने कहा है–पुरुषो वाव यज्ञः–3, 6–यहाँ हमारे पूरे रूप, जीवन को यज्ञ नाम दिया गया है। सत्यार्थ प्रकाश में इस उद्धरण का अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती लिखते हैं–

> **"जो पुरुष अन्न रसमय देह और पुरि अर्थात् देह में शमन करने वाली जीवात्मा यज्ञ अर्थात् अतीव शुभगुणों से संगत और सत्कर्त्तव्य है"**– {सत्यार्थ प्रकाश–तृतीय समु.–3, पृ.– 46}

जीवन के प्रथम काल वाले को वेद ब्रह्मचारी नाम से पुकारते हैं अर्थात् विद्यार्थी के लिए वेद में ब्रह्मचारी शब्द आया है। यह शब्द बहुत ही स्वारस्यपूर्ण है क्योंकि इससे जहाँ उसकी दिनचर्या, जीवनचर्या, साधना का संकेत सामने आता है, वहाँ उसके जीवन के लक्ष्य का भी निर्देश प्राप्त होता है। ब्रह्मचारी शब्द ब्रह्म और चारी {चर्+इन्} अन्तः करण–आत्मा और सिर रूपी द्यौ. उदर सम अन्तरिक्ष तथा पृथिवी सदृश पाद भाग का विकास, परिपाक, परिपोषण करती है। ऐसे ही शिक्षक शिष्यों के व्यवहार में आने वाली ज़रूरत की अधिक से अधिक वस्तु का ज्ञान देता है। जीवन के अंशों का सर्वविध विकास पोषण, संवर्धन करता है। जिससे शिष्य प्रत्येक प्रकार से पुरुष–पूर्ण, मुकम्मल, परफेक्ट बन सके।

विशेष विषय में विशेषज्ञ बनने की इच्छा रखने वाले विद्यार्थियो ! इस आयु, अवसर के स्वारस्य को सामने रख कर छान्दोग्य उपनिषद् के ऋषि ने जीवन की सफलता के मूलमन्त्र को बतलाते हुए कहा है– **बलमुपास्य**–7,8,1– अर्थात् विद्याबल तथा शरीरबल की साधना के लिए सदा प्रयत्नशील रहो। यह अवस्था स्वाभाविक रूप से स्वास्थ्य संवर्धन और ज्ञानप्राप्ति, का स्वर्ण अवसर, सहयोगी सुविधा है। इस साधना में सदा निरत रहना चाहिए अतः उत्साह, आशा के साथ इसमें ऐसे जुटो कि उसमें कभी चूक न हो।

182, शालीमार नगर
होशियारपुर–146001

☞ पृष्ठ 06 का शेष

उत्पत्ति का विज्ञान...

'मनुस्मृति' की रचना की और उन्होंने ही नौका का आविष्कार किया था। अग्नि की उत्पत्ति पत्थरों के घर्षण से की गई थी। आदिम मानव को भोजन का ज्ञान, पहले पशु–पक्षियों एवं ऋषियों से प्राप्त हुआ था, कि क्या खाना चाहिये और क्या नहीं। उसके पश्चात् मिट्टी के बर्तन बनाकर भोजन पकाया जाता था। क्रमशः भोजन, यातायात करने के लिये घोड़ा, बैलगाड़ी बनाया गया। उसके बाद, भाला, तीरधनुष, धीरे–धीरे लाखों वर्ष बाद ऋषियों ने वेदों से, वेदांगों की रचना की। कौन–कौन सी रचना की थी, इन सबके सम्बन्ध में हम बाद में लिखेंगे।

जीव जगत् की सृष्टि के पहिले, ईश्वर की प्रेरणा से, जीवन उपयोगी पंचतत्वों के – अन्तर्गत समुद्र और हिमालय की सर्वप्रथम रचना हो गई थी। उसके बाद 'सत्, रज, तम के परमाणुओं एवं उनके गुणों से प्रत्येक प्राणी के पूर्वज और मानव, मानवी की उत्पत्ति होने लगी।

बन्दर से वनमानुष और वनमानुष से, मनुष्य की उत्पत्ति नहीं हुई। यदि ऐसा हुआ होता तो आज भी बन्दर से वनमानुष, और वनमानुष से मनुष्य बनते होते। जिस प्रकार 'सूँड़ी कीड़ा से, तितलियों की उत्पत्ति आज भी होती है। भृंगी की उत्पत्ति एक विशेष कीट से होती है। जिन जीवों एवं अन्य प्राणियों से विकसित होकर अन्य प्राणी अर्थात् पशु–पक्षी बने थे, वे आज भी मौजूद हैं, सूअर जैसे पशु से विकसित होकर हाथी नहीं बना, क्योंकि उस जैसे–प्राणी कितने ही नष्ट हो चुके हैं जैसे नीलगाय आदि।

मनुष्य की सृष्टि मनुष्य तक ही सीमित क्यों रह गई ? यदि ईश्वरीय नियम चाहते तो मनुष्य के बाद किसी ऐसे मनुष्य की उत्पत्तिकर देते, जिसके तीन नेत्र होते, किन्तु उसने ऐसा नहीं किया। **आश्चर्य लगता है कि आदि सृष्टि में समस्त जाति के जीव और मनुष्य बिना माता–पिता के कैसे उत्पन्न हो गये ?**

सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, जस्ता, शीशा, पारा, अबरख और नवरत्न कैसे बने ? पत्थर कोयला, तेल, गैस, विस्फोटक पदार्थ और यूरेनियम आदि क्यों उत्पन्न हुए ? (वह विधाता जानता था क्योंकि वह वैज्ञानिकों का वैज्ञानिक है) कि आगे चलकर मनुष्यों को इन सब खनिज पदार्थों की आवश्यकता अवश्य पड़ेगी, इसलिये कोई त्रुटि नहीं रक्खी)

मनुष्य को चलने के लिये दो पैर, कर्म करने के लिये दो हस्त और उनकी पाँच–पाँच, अँगुलियाँ। अनुभव विचार करने के लिये मस्तिष्क में चेतन, बुद्धि, मन। मुख, जिह्वा, कंठ, नासिका के दो छिद्र, दो नेत्र देखने के लिये, दो कर्ण, मल–मूत्र त्याग करने के लिये शरीर के नीचे दो इन्द्रियाँ, दो किडनी कैसे और किसलिये कुदरत ने बनाईं ? पक्षियों को उड़ने के लिये दो पंख, उनकी विभिन्न प्रकार की बोली। पिण्डज प्राणी को दूध देने वाली, और अण्डज को वैसा नहीं बनाया, इन सबका अनुभव करने से विचार काम नहीं करता। जो अंग जिसके लिये बनाये गये थे, वे अंग उसके उसी रूप में विकसित हुए थे और होते हैं। छिपकली अर्थात् गिरगिट आज भी हैं, किन्तु वे मगरमच्छ नहीं बन सकते। सृष्टि में परिवर्तन वहीं तक होता है, जहाँ तक उसे होना है। दर्जी कपड़े की काट–छाँट तभी तक करता है जब तक कुर्त्ता तैयार नहीं हो जाता। जो जिस जाति, रूप, स्वभाव का प्राणी अथवा पक्षी आदि रहता है, उन सबका गर्भ में परिवर्तन और विकास उसी रूप में अंगो का निर्माण होता है। परिवर्तन का विज्ञान गर्भ से लेकर वृद्धावस्था तक ही सीमित रहता है। परिवर्तन के अनेक रूप होते हैं। मन चंचल है। वह एक भाव में नहीं रहता। जिस प्रकार नदी में ढेव अर्थात् तरंग उत्पन्न होते रहते हैं, उसी प्रकार मन में इन्द्रियों के द्वारा कई प्रकार के विचार आते–जाते रहते हैं, किन्तु उसके मौलिक तत्व में परिवर्तन नही होता।

सूक्ष्म से सूक्ष्म कणों में क्रिया विद्यमान रहती है, इसीलिये तो सृष्टियों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होती रहती है। बिना क्रिया के जीवन नहीं रह सकता। मृत्यु के बाद भी अदृश्यरूप में क्रिया विद्यमान् रहती है, तभी तो उसका पुनर्जन्म होता है।

सूर्य में अविरत क्रिया चल रही है जितने अग्नि शिखा निकलते हैं उतने ही उसमें किसी महाशक्ति की प्रेरणा से उत्पन्न हो जाते हैं, इस प्रकार उनका अस्तित्व बना रहता है।

मु. पो. मुरारई, जिला–वीरभूम
(पश्चिम बंगाल)

पत्र/कविता

प्रधान मंत्री जी से निवेदन

''नोएडा में बन रहे जेवर एयरपोर्ट का नाम 'महर्षि दयानंद सरस्वती एयरपोर्ट' रखा जाए''

भारतवर्ष की स्वतंत्रता चेतना, सामाजिक जागरण और कुरीतियों के उन्मूलन में महर्षि दयानंद सरस्वती का अतुलनीय योगदान रहा है। उन्होंने वेदों के प्रकाश से समाज को अंधविश्वास, छुआछूत, बालविवाह, जातिगत भेदभाव जैसी सामाजिक बुराइयों से मुक्त करने का अभियान चलाया। "वेदों की ओर लौटो" का उनका आह्वान केवल धार्मिक संदेश नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण का शंखनाद था। उनके विचारों ने स्वतंत्रता संग्राम के अनेक सेनानियों को प्रेरणा प्रदान की और भारत के आत्मसम्मान को जागृत किया।

आज जब उत्तर प्रदेश विकास के नए आयाम स्थापित कर रहा है और नोएडा में विश्वस्तरीय एयरपोर्ट का निर्माण हो रहा है, तब यह अत्यंत उपयुक्त होगा कि इस अंतर्राष्ट्रीय पहचान प्राप्त करने वाले हवाई अड्डे का नाम **"महर्षि दयानंद सरस्वती एयरपोर्ट"** रखा जाए। इससे न केवल प्रदेश, बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र और विश्व समुदाय के समक्ष उस महर्षि के आदर्शों का संदेश पहुँचेगा, जिन्होंने मानवता, शिक्षा, समानता और राष्ट्रनिर्माण की दिशा में अद्वितीय कार्य किया।

यह नामकरण भावी पीढ़ियों को अपने महान वैदिक ऋषि के प्रति गर्व और प्रेरणा का स्रोत प्रदान करेगा तथा उत्तर प्रदेश को सांस्कृतिक और आध्यात्मिक गौरव से भी जोड़ेगा।

अतः आपसे विनम्र निवेदन है कि जनभावनाओं का सम्मान करते हुए जेवर एयरपोर्ट का नाम "महर्षि दयानंद सरस्वती एयरपोर्ट" घोषित करने की कृपा करें।

आचार्य अनुज शास्त्री,
अध्यक्ष–सनातन वैदिक पुरोहित एवं आर्योपदेशक निर्माण केंद्र

****

उत्तिष्ठत-जाग्रत-प्राप्य वरान्निबोधत

उठो !
पर केवल देह से नहीं,
चेतना से उठो।
जागो !
पर केवल नेत्रों से नहीं,
अंतर के आवरण हटाकर जागो।

जीवन एक विश्राम नहीं,
यह एक आह्वान है।
आत्मा को अपने स्वरूप की ओर
लौटने का निमंत्रण है।
श्रेय का मार्ग
सदा सरल नहीं होता।
वह क्षुर की धार समान है
सूक्ष्म, तीक्ष्ण, संतुलन माँगता हुआ।

एक क्षण की असावधानी
और मन फिर मोह में गिर पड़ता है।
यह पथ बाह्य संसार से भागना नहीं,
अपितु भीतर के अंधकार से जूझना है।
यह युद्ध किसी और से नहीं,
स्वयं के संशयों से है।
यह विजय किसी राज्य की नहीं,
स्वाध्याय की है।

उठना है
तो जड़ता से ऊपर उठो।
जागना है
तो अज्ञान की नींद से जागो।
गुरु का संकेत केवल दिशा है,
चलना स्वयं को ही होगा।
सत्य का द्वार खुला है,
पर प्रवेश साहस माँगता है।

यह मार्ग क्यों कठिन है?
क्योंकि यहाँ दिखावा नहीं चलता,
यहाँ मुखौटे गिरते हैं,
और मन अपनी वास्तविकता से
साक्षात्कार करता है।
क्षुरधार का पथ
वैराग्य और विवेक का संतुलन है।
न अत्यधिक आसक्ति,
न कठोर पलायन।

बस सजगता
हर क्षण, हर श्वास में।
जो जागा, वही जीवित है।
जो उठा, वही अग्रसर है।
जो चला, वही पार पहुँचा।
उत्तिष्ठत।
जाग्रत।
प्राप्य वरान्निबोधत।
जीवन प्रतीक्षा नहीं करता
पर सत्य प्रतीक्षा करता है
कि तुम उसे जानो।

डॉ. कीर्ति शर्मा
प्रधान, आर्यसमाज
करोल बाग, नई दिल्ली

श्री रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी विवेकानन्द का 'शरीर में आत्मा के निवास स्थान' विषयक मन्तव्य

कैलिफोर्निया से 21 फरवरी, 1900 को स्वामी अखण्डानन्द को लिखे पत्र में स्वामी विवेकानन्द ने लिखा है–

"ज्ञानमय, शक्तिमय तथा कर्ममय आत्मा का निवास–स्थान मस्तिष्क में नहीं, वरन् हृदय में है। **'शतं चैका च हृदयस्य नाड्यः'**– हृदय की नाड़ियाँ एक सौ एक हैं, इत्यादि। मुख्य नाड़ी का केन्द्र, जिसे संवेदक समूह (Sympathetic ganglia) कहते हैं, हृदय के निकट होता है; और यही आत्मा का निवास दुर्ग है।"

{स्रोतः विवेकानन्द साहित्य संचयन, पृष्ठ 398, प्रस्तुतकर्ताः भावेश मेरजा}

****

सस्ती, सुलभ होती है कपड़ों से बनी पादुका

यह सुखद है कि अधिकांश आर्य परिवारों के सदस्य चमड़े से बनी पादुकाओं को स्वीकार नही करते, अर्थात् वे कपड़े से बनी पादुकाओं का ही प्रयोग करते है। यह अत्यन्त सुखद है।

चमड़े से बनी चरण पादुका प्रायः पशुओं की त्वचा से बनी होती हैं जो भारतीय संस्कृति के अनुरूप नहीं होती। केवल आर्य परिवार ही नही भारतीय धर्म के अधिकांश ऋषि, विद्वान् आदि भी चमड़े के पादुका प्रयोग नहीं करते थे।

कपड़े से बनी पादुका उच्च रक्त चाप को सहज बनाती है तथा मौसम के अनुरूप रहती है चरण पादुका से पैरों को क्षति नहीं पहुँचती। कपड़ों की पादुका से पसीना नहीं आता। सस्ती, सुलभ होती है कपड़ों से बनी पादुका।

कृष्ण मोहन गोयल
अमरोहा

आर्यसमाज मॉडल टाउन पानीपत का 74वाँ वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज मॉडल टाउन पानीपत का 74वाँ वार्षिक उत्सव गायत्री यज्ञ से आरंभ हुआ। श्री लाजपत बावेजा जी द्वारा ध्वजारोहण किया गया।

महर्षि के जन्मदिवस के अवसर पर जयपुर से आए वैदिक प्रवक्ता आचार्य उषरबुध ने महर्षि के अनछुए पन्नों पर व्याख्यान दिया।

द्वितीय दिवस पर आर्य गुरुकुल, आर्यसमाज मॉडल टाउन पानीपत की ब्रह्मचारिणियों तथा छात्राओं द्वारा सम्पन्न यज्ञ के कार्यक्रम आकर्षण का केंद्र बना।

आचार्य उष्रबुद्ध ने अपने व्याख्यान को वैदिक व्रतों के पालन की ओर केंद्रित करते हुए बहुत ही सूक्ष्मता से वेदों पर चर्चा की।

तृतीय दिवस की प्रातः यज्ञ के पश्चात् आचार्य उषबुद्ध ने युवा पीढ़ी का मार्ग दर्शन किया और कहा आज के परिवेश में गुरुकुल ही पथभ्रष्ट युवाओं का उचित मार्ग दर्शन कर सकते हैं।

सायंकालीन सत्र में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें आर्य कन्या गुरुकुल आर्य समाज मॉडल टाउन की छात्राओं ने सामूहिक व एकल प्रस्तुति दी। मुख्य अतिथि, पानीपत के शहरी विधायक, श्री प्रमोद विज जी ने कार्यक्रम की प्रशांसा की। बच्चों ने योगा तथा बल्लखम्ब का प्रदर्शन किया। मुख्य अतिथि ने सभी प्रतिभागियों को आचार्य जी के साथ पारितोषिक बांटे।

अंतिम दिन महर्षि दयानंद जी के बोधोत्सव के अवसर पर 151 कुण्डीय यज्ञ हुआ।

महिला आर्य समाज की श्रीमती अलका आहूजा, ब्रह्मचारिणी सुखदा, श्रीमती सुमेधा गुलाटी तथा श्रीमती सरिता आहूजा के मधुर भजनों ने सबका मन मोह लिया।

प्रधान, शशि कांत चढ़ा जी ने वरिष्ठ सदस्यों को साथ ले कर कार्यक्रम को सफल बनाया।

डी.ए.वी. सेक्टर 8-सी, चंडीगढ़ में पूर्व छात्र मिलन समारोह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर 8–सी, चंडीगढ़ में सत्र 1994–95 के पूर्व छात्रों के लिए मिलन समारोह आयोजित किया गया। कार्यक्रम अपने बचपन और अपनी जड़ों से फिर से जुड़ने का अवसर था।

कार्यक्रम की शुरुआत पावन वैदिक यज्ञ से हुई। वैदिक मंत्रों की ध्वनि और प्रज्वलित अग्नि ने वातावरण को शांत और भावुक बना दिया। पूर्व छात्रों के मन में सत्य–निष्ठा, अनुशासन, ईमानदारी, परिश्रम करना और समाज के प्रति संवेदनशीलता के मूल्य ताज़ा हो उठे।

प्रधानाचार्य श्री मंतोषपाल सिंह ने सभी पूर्व छात्रों का आत्मीयता से स्वागत किया और कहा कि किसी भी विद्यालय की सबसे बड़ी उपलब्धि उसके विद्यार्थी होते हैं। जब वे जीवन के सफलता की ऊँचाइयों को छूते हैं और अपने संस्कारों को जीवित रखते हैं, तभी शिक्षा सार्थक होती है।

सभी ने अपनी–अपनी जीवन यात्रा साँझा की।

उपस्थित विशिष्ट पूर्व छात्रों–सुश्री ऋतु शर्मा (आई.आर.एस.), डॉ. दिनकर कुलश्रेष्ठ (न्यूरोसर्जन, के.जी.एम.सी., लखनऊ), श्री अमित सिंगला (क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, चंडीगढ़) और विंग कमांडर प्रणव शर्मा (भारतीय वायु सेना)–ने अपनी उपलब्धियों का श्रेय अपने गुरुओं और विद्यालय के वातावरण को दिया। स्मृति–चिह्नों का आदान–प्रदान हुआ।

डी.ए.वी. भड़ौली (हि.प्र.) में महर्षि जयन्ती

डीएवी भझेली. स्कूल में वैदिक धर्म एवं सामाजिक सुधार के अग्रदूत महर्षि दयानन्द सरस्वती की जयंती श्रद्धा उत्साह और गरिमा के साथ मनाई गई। कार्यक्रम में समाज के गणमान्य व्यक्तियों, शिक्षकों, विद्यार्थियों ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया।

कार्यक्रम का शुभारंभ वैदिक मंत्र उच्चारण एवं यज्ञ से किया गया, जिसमें उपस्थित सभी लोगों ने आहूति अर्पित कर समाज में सत्य, नैतिकता और समानता के मूल्यों को अपनाने का संकल्प लिया। विद्यार्थियों ने महर्षि दयानन्द के विचारों को आज के समय में अत्यंत प्रासंगिक बताया और 'वेदों की ओर लौटो' के उनके संदेश को आत्मसात करने का आह्वान किया।

प्रधानाचार्य सुरजीत कुमार राणा ने कहा महर्षि दयानन्द ने शिक्षा, नारी सशक्तिकरण, सामाजिक समानता और अंधविश्वास के उन्मूलन के लिए जो संघर्ष किया, वह आज भी समाज के लिए मार्गदर्शक है। उनके सिद्धान्त युवाओं को सत्य, साहस और आत्मनिर्भरता की प्रेरणा देते हैं।

कार्यक्रम का समापन राष्ट्रहित एवं समाज सुधार के संकल्प के साथ हुआ। इस आयोजन में विद्यार्थियों में नई ऊर्जा और सकारात्मक चेतना का संचार किया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2026

☞ पृष्ठ 01 का शेष

पाणिनि महाविद्यालय, रेवली ...

है। इस ग्रन्थ के सस्वर टङ्कण को सम्पन्न करने श्री महेन्द्र आर्य (करनाल) के अभूतपूर्व योगदान को भी प्रशंसित किया गया।

भूतपूर्व लोकायुक्त (हरयाणा) न्यायमूर्त्ति श्री प्रीतमपाल सिंह द्वारा आर्षविद्या के संरक्षण व संवर्धन में समर्पित 9 विद्वानों को 50000/– की चैकराशि, श्वेत चादर तथा गायत्री पट्टिका प्रति व्यक्ति देकर सम्मानित किया गया। पाणिनि महाविद्यालय, रेवली के वार्षिकोत्सव पर न्यायमूर्त्ति श्री प्रीतमपाल जी के द्वारा सम्मानित आचार्य एवं संस्था–1. आचार्य विवेक चैतन्य (हरियाणा) 50000/– 2. रामजी कुमार (बिहार) 50000/– 3. विश्वम्भर (नेपाल)–50000/– 4. विद्याव्रत कुमार (बिहार)–50000/– 5. कृष्ण प्रसाद (झारखण्ड) 50000/– 6. वेदपाल आर्य (उत्तरप्रदेश)–50000/– 7. संजीव कुमार शर्मा (उत्तरप्रदेश) 50000/– 8. सुनील कुमार (उत्तरप्रदेश)– 50000/– 9. अखिलेश आर्य (उत्तरप्रदेश)–50000/– 10. पाणिनि महाविद्यालय (हरियाणा) –50000/– पाणिनि महाविद्यालय रेवली को भी 50000/– रुपये की राशि समर्पित की गई। इस राशि का विनियोग रामलाल कपूर ट्रस्ट से नवीन प्रकाशित साहित्य वैदिककोष तथा वैदिक विद्वानों को प्रदान करने में किया गया। यह सस्वर परिष्कृत परिवर्धित द्वितीय संस्करण है।

वैदिक कोष का आज विमोचन भी किया गया। आचार्य प्रशस्यमित्र शास्त्री द्वारा लिखित त्रिमुनि – सायुज्यम् ग्रन्थ का भी विमोचन किया गया। यह ग्रन्थ गुरुवर पण्डित ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, पण्डित युधिष्ठिर जी मीमांसक तथा आचार्य विजयपाल जी विद्यावारिधि के सान्निध्य में लेखक द्वारा अनुभूत प्रेरक व रोचक वृत्तान्तों का संग्रह है।

इस बार स्नातक– सम्मान – परम्परा में आचार्य हरिप्रसाद जी (तेलंगाना) को एक लाख 100000/– रुपये का चैक, प्रशस्ति–पत्र, श्वेतचादर तथा गायत्री पट्टिका देकर सम्मानित किया गया।

भूतपूर्व पुलिस कमिश्नर तथा सांसद (बागपत) डॉ. सत्यपाल सिंह जी का भी आज आगमन हुआ। आपने आज के मुख्य विषय **"वैश्विक अशान्ति के निदान एवं समाधान में आर्यसमाज का योगदान"** पर अपना उद्बोधन प्रस्तुत किया।

रामलाल कपूर ट्रस्ट के प्रधान आचार्य सोमदेव शास्त्री ने सबका धन्यवाद ज्ञापन किया। सभी ने इसके बाद सुस्वादु भोजन ग्रहण किया। आयोजन में लगभग 500 लोगों की सहभागिता रही।

डी.ए.वी. लठियाणी (हि.प्र.) में विशेष यज्ञ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल लठियाणी में आगामी परीक्षाओं में विद्यार्थियों की सफलता और उज्ज्वल भविष्य की कामना के लिए विशेष हवन का आयोजन किया गया। इस पावन कार्यक्रम में कक्षा 10वीं व 12वीं के विद्यार्थियों के साथ उनके शिक्षक उपस्थित रहे।

हवन का शुभारंभ प्रधानाचार्य श्री वरुण शर्मा व विद्यालय की संस्कृत अध्यापिका रीता शास्त्री द्वारा वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ किया गया। मंत्रों की पवित्र ध्वनि से समूचा स्कूल प्रांगण आध्यात्मिक वातावरण से सराबोर हो उठा। विद्यार्थियों ने पूर्ण श्रद्धा और एकाग्रता के साथ हवन में आहुति दी तथा अपनी सफलता के लिए प्रार्थना की।

प्रधानाचार्य ने विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए स्वामी दयानंद सरस्वती एवं महात्मा हंसराज के प्रेरणादायी जीवन पर प्रकाश डाला और कहा कि अनुशासन, परिश्रम और सकारात्मक सोच ही सफलता की कुंजी है। प्रधानाचार्य ने विद्यार्थियों को आगामी बोर्ड परीक्षाओं में आत्मविश्वास के साथ परीक्षा देने का संदेश दिया।

अंत में कक्षा 10वीं और 12वीं के विद्यार्थियों की सफलता हेतु विशेष प्रार्थना की गई। शान्ति पाठ से कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. सैक्टर-15ए, चण्डीगढ़ की 'झाँकी' सम्मानित

केन्द्रीय आर्य सभा (चण्डीगढ़, पंचकूला एवं मोहाली) के संयुक्त तत्त्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती की 202वीं जयंती के पावन अवसर पर पंचकूला नगर में एक भव्य शोभायात्रा का आयोजन किया गया। इस गरिमामय आयोजन में ट्राई – सिटी के विभिन्न शिक्षण संस्थानों एवं आर्य समाजों ने उत्साहपूर्वक सहभागिता करते हुए विविध सामाजिक एवं वैदिक विषयों पर आकर्षक "झाँकियाँ" प्रस्तुत कीं।

शोभायात्रा गुरुकुल, सैक्टर–20, पंचकूला से प्रारम्भ होकर आर्य समाज, सैक्टर–9, पंचकूला में सुसम्पन्न हुई।

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, सैक्टर–15ए, चण्डीगढ़ द्वारा **"वेदों की राह नशामुक्त समाज"** विषय पर एक प्रभावशाली एवं संदेशप्रधान झाँकी प्रस्तुत की गई, जो दर्शकों के लिए विशेष आकर्षण बनी। झाँकी के माध्यम से वैदिक मूल्यों पर आधारित नशामुक्त, स्वस्थ एवं जागरूक समाज का सशक्त संदेश दिया गया। केन्द्रीय आर्य सभा द्वारा आयोजित मुख्य जन्मोत्सव कार्यक्रम में इस उत्कृष्ट झाँकी को विशेष प्रशंसा सहित पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

प्राचार्या अनुजा शर्मा ने इस सम्मान को विद्यालय परिवार के लिए गर्व एवं प्रेरणा का विषय बताया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**